RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म.प्र. / भोपाल / 261 / 2015-17 प्रकाशन तिथि 25 नवम्बर 2015

चकमक

बाल विज्ञान पत्रिका दिसम्बर 2015

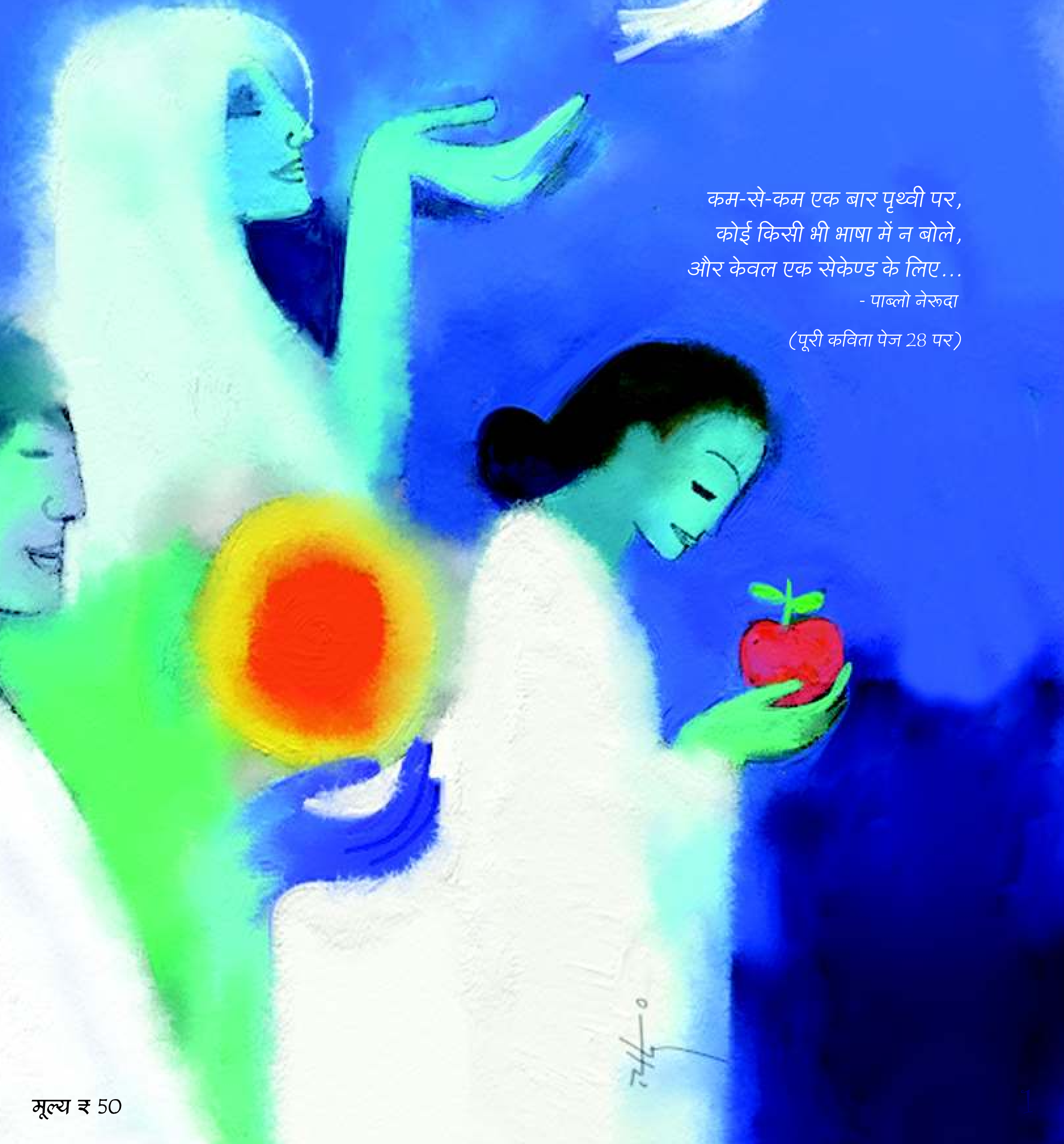

कम-से-कम एक बार पृथ्वी पर,
कोई किसी भी भाषा में न बोले,
और केवल एक सेकेण्ड के लिए...
- पाब्लो नेरूदा

(पूरी कविता पेज 28 पर)

मूल्य ₹ 50

आकाश की तरफ

आकाश की तरफ
अपनी चाबियों का गुच्छा उछाला
तो देखा
आकाश खुल गया है

ज़रूर आकाश में मेरी
कोई चाबी लगती है
शायद मेरे सन्दूक की चाबी

\- विनोद कुमार शुक्ल

ध्यान

लैण्डस्केप

आकार

मोहन शिंगणे

सभी की अपनी-अपनी रुचियाँ होती हैं। कुछ खास कुछ ज़रा कम खास। बचपन में मुझे आकार, रूप अपनी ओर खींचते थे। मैं उन्हें देखते रहता। उनकी खूबसूरती को महसूस करता। यह सब मुझे खुशी से भर देता था।

(शेष भाग पेज 8 पर)

बाल विज्ञान पत्रिका

चकमक

अंक 351 दिसम्बर 2015

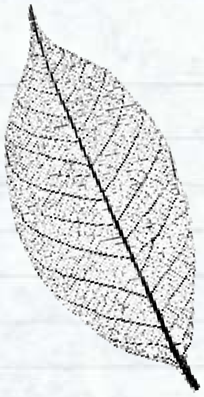

इस अंक में

2 आकाश की तरफ - विनोद कुमार शुक्ल
4 प्यारे भाई रामसहाय - स्वयं प्रकाश
8 आकार - मोहन शिंगणे
10 मिट्टी - अरुण कमल
12 क्रिसमस का तोहफा - मो. इदरीस सिद्दिकी
14 कोलकाता का विशाल बरगद - भरत पुरे
16 सोफी की कहानी - जॉस्टीन गार्डनर
20 माथापच्ची
21 बोली रंगोली
25 धुएँ पे पानी - मधु कांकरिया
26 रोते हो, इसलिए लिखते हो - लाल्टू
28 चुप रहो- पाब्लो नेरूदा
29 एक गतिविधि - अंकुश गुप्ता
30 दोस्त - शशिकिरण
34 मेरा पन्ना
38 गुप्ता जी वैज्ञानिक बना रहे हैं और न्यूटन रो रहा है - ज्ञान चतुर्वेदी
42 साँपों के सुबहें- सन्तोष कृष्णमूर्ति
44 फनी पाठशाला - इरफान
46 एक था हाजी एक था नाजी - स्वयं प्रकाश
47 चित्र पहेली

चित्र: लक्षय, पहली, डीपीएस तापी

खेलत रहेन

भैय्या रे भैय्या कहाँ रहेव
बेले बबूर तरे खेलत रहेन
भैय्या रे भैय्या का करत रहेव
बड़की गढ़हिया में खेलत रहेव
सागर मे मछरी बटोरत रहेन
लाली बजरिया में बेचत रहेन
अपन अम्मा का ढूँढत रहेन

(यह अवधि गीत - आगा खान फाउण्डेशन के लोक काव्य संकलन से)

विप्रो एप्लाइंग थॉट इन स्कूल्स के
वित्तीय सहयोग से विकसित

आवरण चित्र
चन्द्रमोहन कुलकर्णी

हाशिए के चित्र
सुनीता

सम्पादन
सुशील शुक्ल
शशि सबलोक

सहायक सम्पादक
कविता तिवारी

विशेष सहयोग
पूजा सिंह

विज्ञान सलाहकार
सुशील जोशी

डिज़ाइन
दिलीप चिंचालकर

एक प्रति : 50.00
वार्षिक : 500.00
तीन साल : 1350.00
आजीवन : 6000.00
सभी डाक खर्च हम देंगे।

चन्दा (एकलव्य के नाम से बने) मनीऑर्डर/चैक से भेज सकते हैं। एकलव्य भोपाल के खाते में ऑनलाइन जमा करने के लिए विवरण- बैंक का नाम व पता - स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, महावीर नगर, भोपाल
खाता नम्बर - 10107770248
IFSC कोड - SBIN0003867
कृप्या खाते में राशि डालने के बाद इसकी पूरी जानकारी accounts.pitara@eklavya.in पर ज़रूर दें।

एकलव्य
ई-10, शंकर नगर, बीडीए कॉलोनी, शिवाजी नगर, भोपाल, म.प्र. 462 016, फोन: (0755) 4252927, 2550976, 2671017
फैक्स: (0755) 2551108, e mail - chakmak@eklavya.in, e mail - circulation@eklavya.in, www.chakmak.eklavya.in, www.eklavya.in

प्यारे भाई रामसहाय

स्वयं प्रकाश

सप्पू, मुन्नू, मज्जू, जक्कू, राधेश्याम और बालकिशन की दोस्ती पूरे स्कूल में मशहूर थी। उनका एक गुट था। ये लोग साथ-साथ रहते थे, साथ-साथ पढ़ते थे, साथ-साथ घूमते थे और हालाँकि इनके घर दूर-दूर थे लेकिन फिर भी अकसर एक-दूसरे के घर आते-जाते रहते थे। इनके परिवारवाले भी इन सबसे अच्छी तरह परिचित थे और वे इन्हें भी अपने परिवार का एक बच्चा ही समझते थे। ये भी एक-दूसरे के अभिभावकों का ऐसा ही सम्मान और लिहाज़ करते थे। मसलन यदि रास्ते में मज्जू को सप्पू के नानाजी दिख जाएँ तो वह उन्हें “नमस्ते नानाजी” कहे बिना आगे नहीं बढ़ेगा। उस समय नानाजी उसे कोई काम बता दें तो मज्जू हरगिज़ कोई बहाना नहीं बनाएगा। और यह स्थिति तब थी जब इनमें से किसी के अभिभावक आपस में कभी नहीं मिले थे।

ये लोग साथ-साथ बैठकर हमेशा कोई न कोई योजना बनाते रहते थे। इनकी योजनाएँ अकसर असफल हो जाती थीं, लेकिन इसके लिए कोई किसी को दोष नहीं देता था, उलटे सब अपनी सामूहिक मूर्खता पर एक साथ हँसते थे। कभी-कभी इनकी योजनाएँ सफल भी हो जाती थीं। वह समय गर्मजोशी से एक-दूसरे से लिपटने का और अपने आप पर नाज़ करने का होता था।

एक दिन बालकिशन ने बताया कि रीगल टॉकीज़ में बच्चों की एक बहुत अच्छी फिल्म लगी है। उसने देखी तो नहीं लेकिन कल भार्गव देखकर आया था। वह क्लास में विस्तार से और अभिनय के साथ उस फिल्म की कहानी सुना रहा था और बीच-बीच में उसके गाने भी गुनगुना रहा था। उसकी बातों से लग रहा था कि फिल्म वास्तव में अच्छी होगी। हम लोगों को भी किसी न किसी तरह इसे ज़रूर देखना चाहिए।

हममें से किसी ने कभी किसी टॉकीज़ में जाकर फिल्म नहीं देखी थी। बालकिशन हममें सबसे बड़ा था और उसके घर का माहौल भी हमारे घरों की तुलना में काफी आज़ाद था, लेकिन उसने भी आज तक टॉकीज़ में जाकर कोई फिल्म नहीं देखी थी। फिल्म देखने का हमारा अनुभव समाज कल्याण विभाग द्वारा सड़क पर दिखाई जानेवाली फिल्मों तक सीमित था। क्लास के कुछ रहीस लड़के जैसे भार्गव या कुटुम्बळे वकील का लड़का अशोक अपने घरवालों के साथ अकसर फिल्म देखने जाते थे और दूसरे दिन क्लास में फिल्म की कहानी सुना-सुनाकर हम पर रुआब मारते थे। ऐसे समय हम मुँह फाड़े उनकी उल्लासभरी एक्टिंग देखते रह जाते थे और सोचते थे कि हमें इनकी तरह टॉकीज़ में फिल्म देखने का मौका कब मिलेगा! हमारे घरवाले फिल्म देखना कोई अच्छी बात नहीं समझते थे। उनका ख्याल था कि फिल्म देखने से बच्चे बिगड़ जाते हैं। हमारे मम्मी-पापा लोग भी बुज़ुर्गों से छुपकर फिल्म देखने जाते थे “डॉक्टर के पास जा रहे हैं” नुमा बहाने बनाकर! ऐसे में हमारा फिल्म देख पाने का तो सवाल ही नहीं उठता था!

बालकिशन की बात सुनकर हम सोच में पड़ गए। एक तरफ टॉकीज़ में फिल्म देखने का प्रलोभन और दूसरी तरफ अशोक और भार्गव जैसे नकचढ़े और घमण्डी लड़कों को नीचा दिखाने की चाहत। नतीजा यह निकला कि सब सिर जोड़कर बैठ गए और फिल्म देखने की योजना बनाने लगे।

रीगल टॉकीज़ हमारे घर से दूर था, लेकिन थोड़ा जल्दी निकलो तो पैदल भी पहुँचा जा सकता था। बालकिशन ने हमें शो के टाइम बताए। बगैर क्लास से तड़ी मारे जाया नहीं जा सकता था.... और क्लास के छह लड़के एक साथ गायब हों तो किसी भी शिक्षक से छिपा नहीं रह सकता था। एक ही तरीका था – रविवार को सुबह के शो में जाया जाए। लेकिन घरवालों से क्या कहेंगे? कह देंगे एक्स्ट्रा क्लास है। लेकिन वे पूछेंगे किसकी और क्यों? आज से पहले तो कभी नहीं हुई! और कभी न कभी तो भाण्डा फूट

ही जाएगा। इससे तो क्यों नहीं ये कहा जाए कि फिल्म बच्चों की है और हमें स्कूल की तरफ से ले जाया जा रहा है... इस बात पर ज़ोर देना पड़ेगा कि फिल्म शिक्षाप्रद है। सर खुद देखकर आए हैं। इस तरह शायद फिल्म का टिकट खरीदने के लिए दो आने भी मिल जाएँगे। उन दिनों सिनेमा का टिकट दो आने ही हुआ करता था।

सप्पू और मुन्नू ने तो ऐसा ही किया। मज्जू-जक्कू ने कोई और बहाना बनाया। बालकिशन के घर पर किसी ने पूछा ही नहीं कि कहाँ जा रहे हो और दो आने वह अपने एक दोस्त से माँग लाया जिसके पिताजी की हजामत की दुकान थी और जहाँ कभी-कभी वह भी गल्ले पर बैठता था। राधेश्याम ने अपनी एक किताब चार आने में बेच दी और सिनेमा के टिकट के साथ-साथ लेमन चूस के लिए भी पैसों का जुगाड़ कर लिया।

और इस तरह हमारी मण्डली पहली बार टॉकीज़ में फिल्म देखने पहुँची।

टॉकीज़ में बहुत भीड़ थी। पूरा हॉल खचाखच भरा हुआ था। बालकिशन हम में सबसे लम्बा था। उसी ने भीड़ में घुसकर सबके टिकट लिए। हॉल शानदार था। पँखे चल रहे थे। पर्दा खूब बड़ा था। सीटें आरामदेह थीं। हालाँकि हम आगे ही आगे बैठे थे और हमें गर्दन ऊँची करके देखना पड़ रहा था।

फिल्म ने शुरू होते ही हमें अपनी गिरफ्त में ले लिया। फिल्म दो बच्चों के बारे में थी। एक लँगड़ा, थोड़ा जाड़ा और भोला-भाला और दूसरा ऊँचा-पूरा और महाशरारती। जाड़े लड़के का नाम शक्ति और लम्बू का नाम अजय। जाड़े की शक्ल हूबहू हमारे एक भूतपूर्व सहपाठी शैलेन्द्र से मिलती-जुलती थी जो अपने पिताजी की अचानक मृत्यु हो जाने की वजह से स्कूल छोड़कर अपने मामाजी के पास बड़ौदा चला गया था। उसे देखकर हम सबको अपने दोस्त शैलेन्द्र की याद आ गई।

फिल्म अजय की शरारतों से शुरू हुई। उस पट्ठे ने ऐसी-ऐसी मस्ती की कि उसे देखकर पूरा हाल ठहाकों से गूँज उठा। कभी रात को भूत बनकर अपने वार्डन को डराता, कभी दाल में ढेर सारा नमक डालकर रसोइए को डाँट पड़वाता। एक दिन कहीं से एक ज़िन्दा कछुवा ले आया और रात को उसकी पीठ पर एक जलती हुई मोमबत्ती लगाकर उसे सर के कमरे में छोड़ दिया। बाप रे! हँसते-हँसते बुरा हाल हो गया!

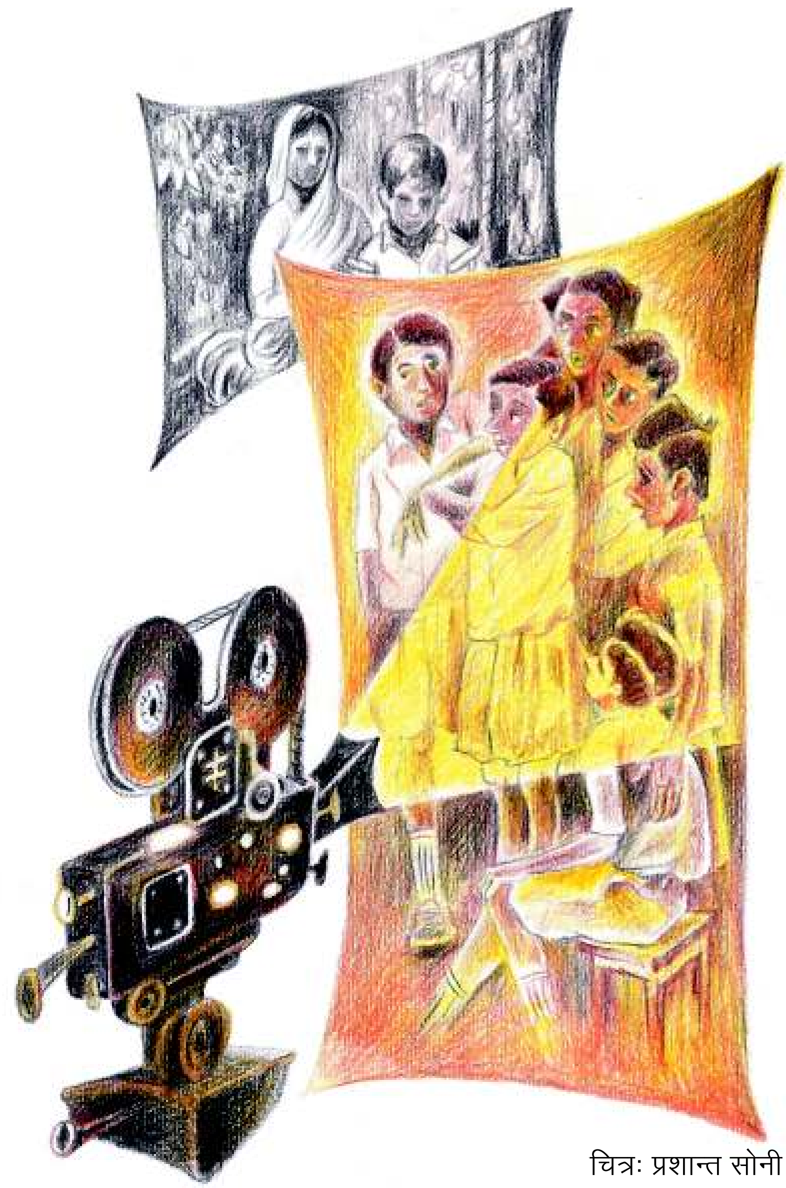

चित्रः प्रशान्त सोनी

लेकिन थोड़ी देर बाद ही सारा माहौल बदल गया। जाड़े लड़के शक्ति की कहानी शुरू हो गई। उसकी माँ आकर बताती है कि वह शक्ति की फीस का जुगाड़ नहीं कर पाई है और शक्ति को स्कूल छोड़ना पड़ेगा। माँ रोने लगती है, शक्ति उसे चुप कराता है। माँ पोटली में बाँधकर शक्ति के लिए रोटी लाई है, उसे खिलाती है। .... शक्ति कहता है कि उसे भूख नहीं है और माँ की लाई रोटी माँ को ही खिला देता है। दृश्य इतना मार्मिक और हृदयस्पर्शी था कि सप्पू सुबकने लगा। बाद में उसने देखा कि वही नहीं सभी रो रहे हैं और अपनी कमीज़ से आँसू पौंछ रहे हैं। थोड़ी देर बाद ऐसा लगा कि वे छह दोस्त ही नहीं, पूरा हॉल रो रहा है और रूमाल से आँसू पोंछ रहा है।

लेकिन तभी शक्ति ने अपने माँ के लिए गाना गाना शुरू कर दिया। गाने में शक्ति माँ से कहता है कि माँ चलो, इस दुनिया को छोड़कर किसी और दुनिया में चलते हैं जहाँ गरीबी, भूख और मजबूरी न हो... गाना इतना मीठा, इतना सुरीला और इतना मार्मिक था कि सारा हॉल गाने के साथ चुटकियाँ बजने लगा या पैरों से फर्श पर थाप देने लगा।

इसके बाद परदे पर अँधेरा हो गया और हॉल की लाइटें जल गईं। सब लोग बाहर निकलने लगे। सबके साथ हम भी बाहर निकल आए। लेकिन ऐसे जैसे सपने में चल रहे हों! एकदम अजय और शक्ति की कहानी में खोए हुए। एक-दूसरे को अपनी भावनाएँ बताते हुए, एक-दूसरे से अपने अनुमान साझा करते हुए, दूसरे से पहले अपनी बात कहने की कोशिश करते हुए और एक-दूसरे की बात काटते हुए... हम चलते रहे। जिस-जिसका घर आया वह कटता गया, बाकी बातों में मगन रहे। अन्त में मुन्नू-सप्पू भी घर आ गए।

अगले दिन हमने क्लास में सबसे पहले भार्गव को पकड़ा और उसे सूचना दी कि कल हम भी टॉकीज़ में फिल्म देख आए हैं। फिर हमने बताया कि हमें फिल्म कैसी लगी और उसका कौन-सा दृश्य सबसे ज़्यादा अच्छा लगा। भार्गव के चेहरे पर कोई परेशानी नज़र नहीं आई। न कोई खुशी न गम। जैसे हमने जो किया वह तो हमें करना ही चाहिए था।

जक्कू ने बताया कि यार मैं तो फिल्म में खूब रोया। भार्गव बोला कि हाँ, जब शक्ति मर जाता है तो उस सीन में तो मुझे भी रोना आ गया था।

"शक्ति मर जाता है? शक्ति कब मर जाता है? हम देखने गए तब तो नहीं मरा! कल तो ज़िन्दा था, बस उसकी माँ आई थी। रोज़-रोज़ अलग-अलग बताते हैं क्या?"

"अरे, जब शक्ति अजय को रोकने के चक्कर में तालाब में गिर जाता है! इंटरवेल के बाद। तुमने पूरी पिक्चर नहीं देखी क्या? इंटरवेल में ही उठकर आ गए थे क्या? इंटरवेल के बाद ही तो असली मज़ा आता है! खूब रोना आता है।"

हमें लगा वाकई, हमसे बड़ा मूर्ख और कौन हो सकता है! चले थे भार्गव को नीचा दिखाने!

लेकिन हम कई दिनों तक फिल्म की ही बातें करते रहे। रात को हमारे सपनों में भी फिल्म के ही दृश्य आते रहे।

कोई हफ्ते भर बाद मज्जू बोला, "उस दिन अपने से कितनी ब्लंडर मिस्टेक हो गई!"

"किस दिन? कौन-सी मिस्टेक?" सप्पू ने पूछा।

मज्जू कुछ पल सप्पू की आँखों में आँखें डालकर देखता रहा और फिर बोला, "अपन दो आने में और रो सकते थे!"

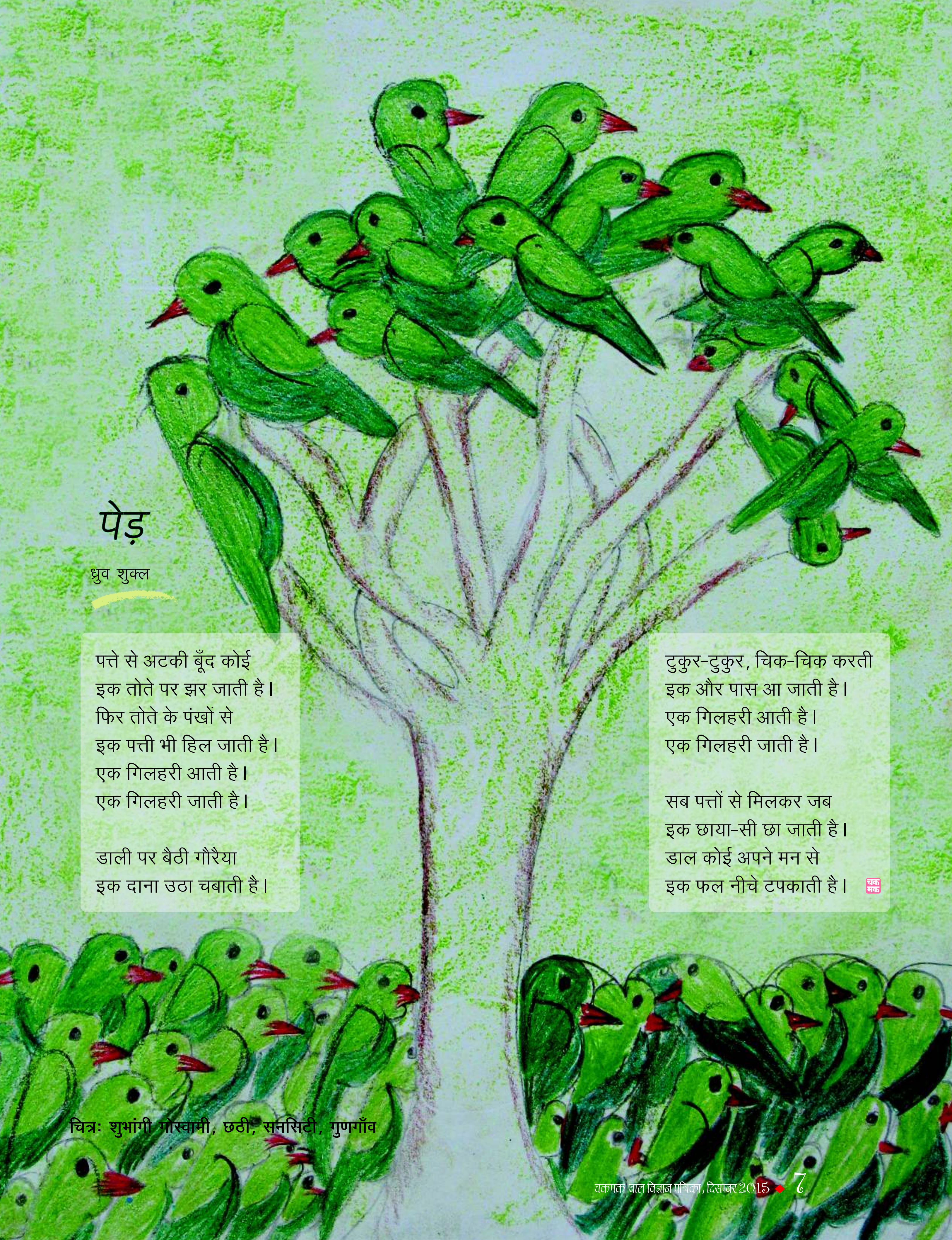

पेड़

ध्रुव शुक्ल

पत्ते से अटकी बूँद कोई
इक तोते पर झर जाती है।
फिर तोते के पंखों से
इक पत्ती भी हिल जाती है।
एक गिलहरी आती है।
एक गिलहरी जाती है।

डाली पर बैठी गौरैया
इक दाना उठा चबाती है।

टुकुर-टुकुर, चिक-चिक करती
इक और पास आ जाती है।
एक गिलहरी आती है।
एक गिलहरी जाती है।

सब पत्तों से मिलकर जब
इक छाया-सी छा जाती है।
डाल कोई अपने मन से
इक फल नीचे टपकाती है।

चित्रः शुभांगी गोस्वामी, छठी, सनसिटी, गुणगाँव

आकार
(कवर 2 का शेष भाग)

गाँवों में अकसर ही चटके हुए गिलास, टूटे हुए मटमैले कप दीवार पर या किसी बाहरी आले पर रखे दिख जाते। जैसे वे बेकार हो गए हैं। घर से उनकी बेदखली हो जाती। इन टूटे-फूटे, अंग-भंग आकारों का काम अब बदल जाता। वे किसी खास व्यक्ति के लिए ही काम में लाए जाते। यानी वे हमारी बनाई छुआछूत को ढोने लगते।

तोहफा

ये आकार चुपचाप मिट्टी की दीवारों पर या आलों में पड़े रहते। कड़ी धूप में, बारिश में या कभी कँपकँपानेवाली ठण्ड झेलते। मुझे लगता जैसे कोई बेघर, बेसहारा जर्जर शरीर हो। जैसे एक आकार जिसका एक अंग कम है या टूटा है। जैसे कोई अशक्त भिखारी।

कभी-कभी लगता एक आकार टूटकर भी तो एक आकार ही रहा। जैसे कि वह पहले था। पर कोई आकार टूटता तो जैसे हमारा उससे रिश्ता टूट जाता। आज भी जो टूटकर मिलता है उस आकार पर प्रेम आ जाता है। मुझे लगता कितना अच्छा है कि दुनिया में सिर्फ इंसान ही नहीं हैं। करोड़ों जीव हैं और करोड़ों तरह के इंसान भी। कोई चिड़िया आती और टूटे बर्तन में रखे पानी को पी जाती।

मुझे सभी जीवों पर प्रेम आता कि वे किसी आकार को बेदखल नहीं करते। जब कोई भेदभाव झेल रहा इंसान आकर इन आकारों का इस्तेमाल करता तो मुझे उसमें एक चिड़िया दिखती। मुझे लगता कि मुझमें यह चिड़ियापन बचा रहे। कोई आकार मुझसे बेदखल न हो।

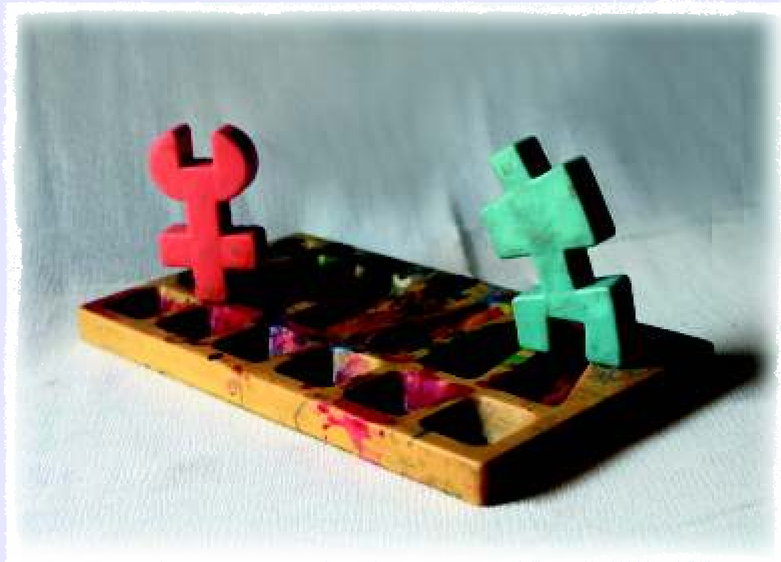

जीवन एक रंगमंच

गाडगे महाराज और बाबा आम्टे ने ऐसे ही कुछ आकारों से प्रेम किया।...

मिट्टी

अरुण कमल

थोड़ी बारिश हुई और चारों तरफ एक सोंधी गन्ध फैल गई। मिट्टी से उठती गन्ध। फिर एक नई गन्ध। घास छीलने पर मिट्टी से निकलती गन्ध। सुबह ओस से भीगी मिट्टी। शाम को कोड़े गए आलू में लिपटी भीगी ठण्डी मिट्टी। दोपहर धूप में तपती तलवों को तपाती मिट्टी। गरमी में जगह-जगह फटती दरकती मिट्टी। खेत, बगीचे, फुलवारी, नदी-पोखर हर जगह मिट्टी। मेरे घर के नीचे भी मिट्टी। और मिट्टी के बने हुए घर। शान्त। शीतल। तलवों में गुदगुदी लगानेवाली लीपी हुई मिट्टी। खेल के मैदान में घास और मिट्टी। पूरी धरती मिट्टी ही तो है। धीरे-धीरे सब कुछ धूल बन जाता है। धूल और मिट्टी।

और इतने रंगों की मिट्टी। धूसर। काली। लाल। पीली। और इतनी तरह की मिट्टी। चिकनी। बलुवाही – बालूवाली। दोमट। उपजाऊ। बंजर। पत्थर भी तो आखिर मिट्टी बन जाता है। और यह मिट्टी तुरन्त पानी सोख लेती है। इतना पानी बरसता है और मिट्टी के घरों में सोया रहता है। जब हम मिट्टी खोदते हैं तो खोदते-खोदते अचानक नीचे कुछ चमकने लगता है। जल। नीचे तल पर छलछल जल। यह कुआँ है। इसमें पाइप डाल दो। चापाकल है। इसे मशीन से बाहर खींच लो। मिट्टी ही घर है जल का।

इस मिट्टी में पता नहीं कितने रंग हैं भीतर छिपे हुए। दुनिया में हज़ारों तरह के फूल हैं। हज़ारों रंगों के फूल। ये सारे रंग मिट्टी ही से तो आए हैं। बिलकुल काली मिट्टी से निकलता लाल गुलाब। मैली मिट्टी से निकली धवल बेला। हज़ार-हज़ार रंग। और हज़ार-हज़ार फल। अन्न। मिट्टी ही हमारी जीवनदायी माँ है। ऐसा कैसे हो सकता है कि एक ही मिट्टी से इतनी तरह के फूल और फल निकलते हैं।

इस मिट्टी की सतह के नीचे लाखों जीवों का डेरा है। सतह पर हमारा घर है। सतह के नीचे उनका घर है। मिट्टी की गोद में सोए चूहे, मूसों, खरगोशों, सर्पों सब के परिवार। भीतर-भीतर गलियाँ और मकान। उन्हीं से हमने भी सीखा मिट्टी के नीचे घर बनाना, मैट्रो और गाड़ियाँ चलाना। लेकिन अजीब बात यह है कि मिट्टी के नीचे भी मिट्टी ही है। अजीब बात है कि मिट्टी कभी मिटती ही नहीं।

चित्रः शोभा घारे

मेरी छोटी बहन को मिट्टी खाने की आदत थी। एक दिन मैंने उसे दीवार से मिट्टी खुरचते देख लिया। मैंने उसे समझाया, पानी पीते हैं, हवा खींचते हैं, पर मिट्टी नहीं खाते। मिट्टी से उपजी चीज़ें खाते हैं। वह मान गई। एक दिन उससे पूछा, "तुमको कौन-सी मिट्टी सबसे अच्छी लगती है?" बोली, "जब आलू उखाड़ते हैं तो उसके गोलों में लिपटी मिट्टी। मूली के साथ लिपटी मिट्टी। जड़ों में लिपटी मिट्टी। बर्तन में पानी के तल पर बैठी मिट्टी। तुरन्त-तुरन्त लीपी आँगन की मिट्टी। तुरन्त-तुरन्त कोड़ी गई मिट्टी। भीगी। ठण्डी। पानी और भापवाली मिट्टी।"

मिट्टी सब कुछ सहती है। इतना बोझ उठाती है। हवा, पानी, आकाश – कहीं भी इतना बोझ नहीं है जितना इस मिट्टी, इस धरती पर। मैं ज़रा-भी कहीं मिट्टी कोड़ता हूँ तो लगता है मिट्टी को चोट लग रही होगी। मैं दुख करता हूँ। लगता है, जब धरती को बहुत चोट लगती है तब वह काँपने लगती है और भूकम्प आता है। तब ऊपर की मिट्टी नीचे चली जाती है।

एक दिन मैं नंगे पाँव घास भरे मैदान में खड़ा था। झुककर देखा तो तलवों के पास मिट्टी पर असंख्य कीड़े घूम रहे थे। मैं बस खड़ा था। एक पौधे की तरह। मिट्टी में कितनी आवाज़ें थीं।

एक दिन मैंने सेम का एक बीज घर के पीछे की मिट्टी में बोया। अगले दिन देखा वहाँ की मिट्टी ज़रा-सा उठी हुई थी और अगली सुबह धूसर मिट्टी को फोड़ता एक हरा पत्ता। दो पत्ते। मिट्टी मेरी माँ। सबकी माँ। मेरे दादा-दादी सब कुछ हवा, कुछ पानी, कुछ आकाश और कुछ मिट्टी में हैं।

जिस तरह पानी के अनेक रंग हैं उसी तरह मिट्टी के भी हैं। जिस तरह आसमान रंग बदलता है उसी तरह मिट्टी भी। मैंने घाटशिला के पास लाल मिट्टी देखी। और हल्दी घाटी में हल्दी के रंग की पीली मिट्टी। गाँव के पोखर के पास काली, चिकनी मिट्टी। लेकिन कहीं भी सफेद मिट्टी नहीं देखी। खड़िया भी तो एक तरह की मिट्टी ही है। पूरी सृष्टि में या तो जल है या हवा या व्योम या मिट्टी। और मिट्टी को जैसे चाहो गूँथ लो। जैसे चाहे मूरतें बना लो। फिर चाहो तो एक गोल पहिया बना लो। और मिट्टी के पहिए को आग में पका लो। मनुष्य के सबसे पहले बर्तन, गहने, औज़ार पक्की मिट्टी के ही तो थे।

चक मक

क्रिसमस का तोहफा

इदरीस सिद्दकी

अँधेरा बढ़ने के साथ बाज़ार की चहल-पहल भी फीकी पड़ने लगी। धीरे-धीरे दुकानें बन्द हो गईं और ग्राहक भी नहीं दिखाई दे रहे हैं। यह बाज़ार कुछ इस तरह बना है कि दुकानों के आगे बरामदा है। थोड़ी दूरी पर खम्भे बने हुए हैं। उसके बाद पैदल चलने की पटरी है और फिर लम्बी सड़क – एक राजमार्ग, जो कोलम्बिया के अन्य शहरों को जोड़ता है। सड़क पार करने के बाद गाड़ियाँ खड़ी करने की जगह है।

रात के दस बज चुके हैं। बन्द दुकानों के आगे बरामदे में खम्भे के सहारे एक तिपाई, दो बहुत छोटे स्टूल, एक भट्टी लगाई जा रही है। कुछ दूरी पर इसी तरह की दुकानें लग रही हैं। खम्भे के पास एक औरत अपनी ग्यारह बरस की बेटी के साथ कॉफी और खाने-पीने की चीज़ों की दुकान सजा रही है। औरत का नाम मारिया है और बेटी का अमपारा है। अमपारा सात बरस की उम्र से माँ का हाथ बँटाती आ रही है। जबसे उसके बाप ने उन्हें छोड़ा, ज़िन्दगी गुज़ारने के लिए माँ ने यह दुकान चलानी शुरू कर दी। पहले तो पुलिस और उचक्कों ने जीना हराम किया, लेकिन धीरे-धीरे मारिया ने सब कुछ जमा ही लिया। अलबत्ता पुलिस को कॉफी मुफ्त पिलानी पड़ती है। मारिया की दुकान रात दस बजे के बाद ही लग सकती है – बाज़ार की चहल-पहल खत्म होने के बाद। मारिया के दोनों बेटे पन्द्रह बरस की उम्र में घर से फरार हो गए। शायद किसी बड़े शहर में जूता पालिश या किसी रेस्तराँ में काम कर रहे होंगे। मारिया अपनी बेटी अमपारा को घर पर अकेली नहीं छोड़ सकती इसीलिए उसे दुकान पर ले आती है। अमपारा ने माँ का हाथ बँटाना शुरू कर दिया। नन्हे-नन्हे हाथों ने बहुत जल्द गिलास धोना और ग्राहकों को कॉफी देना सीख लिया।

इन दुकानों की आमदनी का साधन राजमार्ग पर चलनेवाले ट्रक ड्राइवर, उनके मददगार, मिस्त्री, टैक्सी और टैम्पोवाले हैं। चूँकि यह छोटा-सा शहर राष्ट्रीय मार्ग पर है इसलिए रात भर बेशुमार ट्रक गुज़रते रहते हैं। पास में ही केले की मण्डी है जहाँ रात भर ट्रकों पर केले लादे जाते हैं। ठेकेदार, पल्लेदार, मज़दूर और ट्रक ड्राइवर सभी मण्डी को आबाद रखते हैं। शहर में ट्रकों की आवाजाही की अनुमति रात दस बजे से सुबह तक ही है इसलिए मण्डी और इस खुले बाज़ार में दस बजे के बाद ही रौनक आती है। मारिया की दुकान अमपारा के नाम से जानी जाती है। अमपारा खूबसूरत है और उसके सुनहरे बाल सबको मोहते हैं। कई ड्राइवर तो उसके लिए चॉकलेट जैसे छोटे-मोटे तोहफे भी लाते हैं। मारिया अपनी दुकान पर कॉफी, तले हुए केले, उसके चिप्स और उबले हुए चावल बेचती है। कोलम्बिया में तले हुए केले बहुत पसन्द किए जाते हैं। उसकी कॉफी ग्राहकों में बड़ी लोकप्रिय है। रात ग्यारह बजे से सुबह चार बजे तक माँ-बेटी को पुर्सत नहीं मिलती, मगर इस आमदनी से सिर्फ एक दिन के भोजन का जुगाड़ हो सकता है।

कोलंबिया की नन्हीं अमपारा की यह कहानी गिट्टा सीरीनी की एक रिपोर्ट "बिक्री के लिए बच्चे : प्रति कीमत पच्चीस पाउंड" पर लिखी गई। है यह रिपोर्ट फरवरी 1970 के 'वीक एण्ड टेलीग्राफ' मैगज़ीन लन्दन में छपी थी।

चित्रः अतनु राय

अमपारा ग्यारह बरस की है। वह अँगीठी के पास बैठी ऊँघती रहती है। जब कोई ग्राहक कॉफी पीने आता है तो माँ उसे आवाज़ देती है। अमपारा नींद की झोंक में कॉफी का बर्तन उठाती है जो उसके कद के बराबर है। बर्तन से कॉफी गिलास में डालती है और ग्राहक को देने के बाद फिर ऊँघने बैठ जाती। इतने में उसकी माँ फिर आवाज़ देती है। अमपारा नींद में बर्तन उठाती है। उसके हाथ वज़न से काँप रहे होते हैं। कॉफी उड़ेलती है, ग्राहक को हाथ बढ़ाकर देने के बाद फिर अपने स्टूल पर आकर उसी तरह सोने लगती है। यह क्रम लगभग रात भर चलता है। सुबह साढ़े चार बजे वे अपनी झोंपड़ी में लौट आते हैं जहाँ फर्श पर चीथड़े बिछे हैं और सो जाते हैं। आठ बजे उठकर फिर अपने काम पर चले जाते हैं। मारिया घरों में काम करती है। अमपारा एक कैफे में, जहाँ उसे डेढ़ सौ पीसों महीना मिलते हैं। उसका काम मेज़ पर कॉफी और खाने-पीने की दूसरी चीज़ें लगाना, खाली बर्तन समेटकर धोने ले जाना और धुले बर्तनों को काउण्टर पर पहुँचाना है। मगर उसकी उम्र देखते हुए काम इतना आसान भी नहीं है। बर्तन अभी धुल भी नहीं पाते कि काउण्टर से आवाज़ लगती है, "अमपारा फलाँ मेज़ पर कॉफी पहुँचाओ।" कॉफी पहुँची नहीं कि किचन से हाँका आया। "अमपारा, जल्दी से कप-गिलास धोकर काउण्टर पर पहुँचाओ।" नन्ही-सी जान क्या-क्या करे! एक बार किचन और काउण्टर से एक साथ पुकारे जाने पर वह घबरा गई। उसके हाथ से धुली हुई छह प्लेटें गिरकर टूट गईं। उस दिन उसकी पिटाई तो हुई ही, शाम को छुट्टी से पहले मालकिन ने उसके सुनहरे बाल काटकर तकरीबन गँजा कर दिया। शाम को घर आने पर माँ ने भी उलाहना दिया, "ध्यान देकर काम किया करो वरना नुकसान होने पर सज़ा तो मिलेगी ही। कहीं पगार से रकम काटी गई तो परेशानी हो जाएगी।" मारिया को चिन्ता थी कि किसी तरह अमपारा की शादी के लिए सामान जुट जाए ताकि किसी अच्छे घर में उसकी शादी हो सके।

(शेष भाग पेज 27 पर)

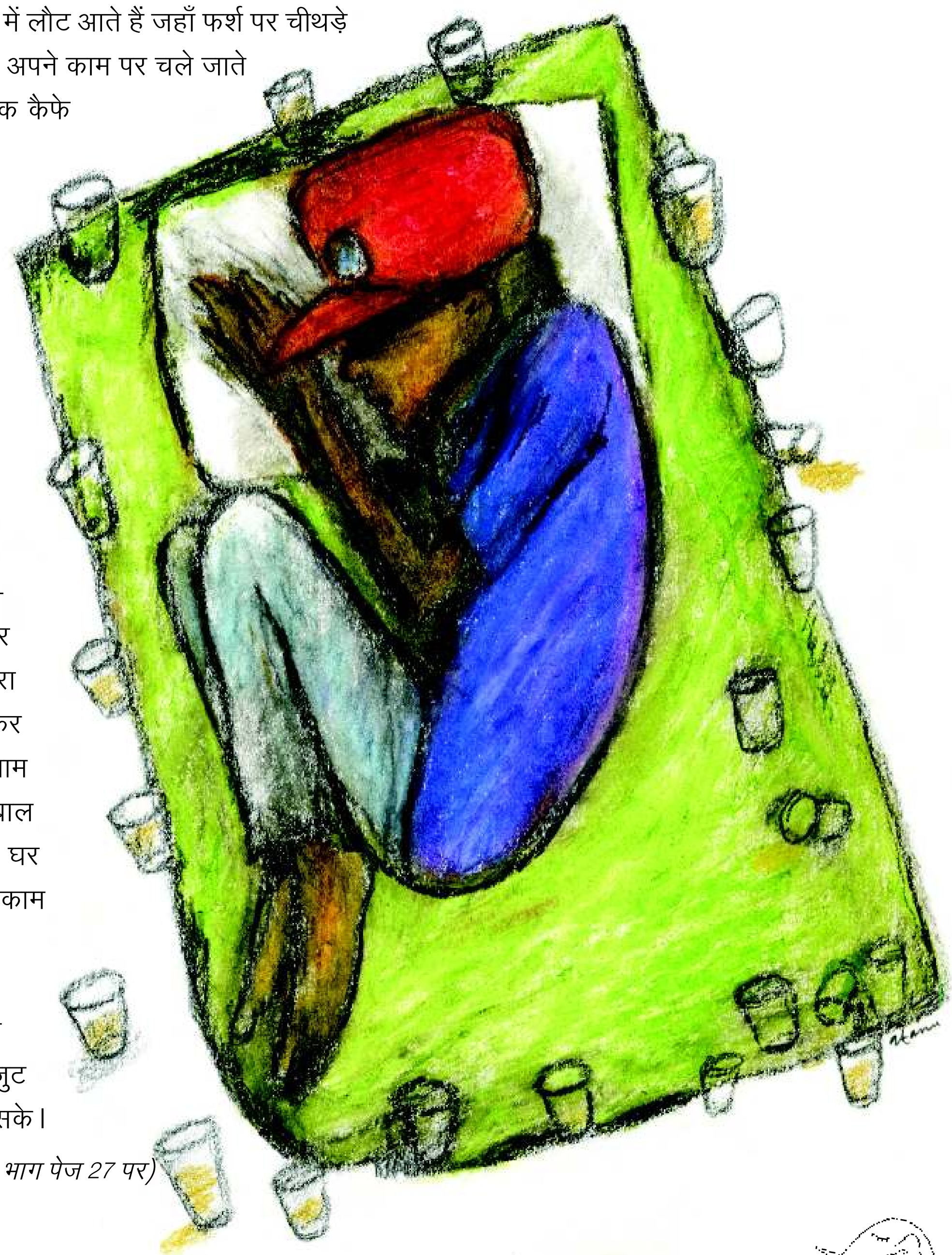

कोलकाता का विशाल बरगद

भरत पुरे

पिछले दिनों कोलकाता जाने का मौका मिला। वहाँ वैज्ञानिक जगदीश चन्द्र बसु के नाम का एक वानस्पतिक उद्यान है। इस उद्यान के एक विशाल बरगद के बारे में मैंने सुन रखा था। वहाँ जाने की बड़ी उत्सकुता थी। सो हम वहाँ गए और इस आश्चर्य में डाल देनेवाले उस विशाल वृक्ष देखा। कल्पना करो कितनी जगह में फैला होगा यह पेड़? 15665 वर्ग मीटर! है न कल्पना से परे!

मोरेसी कुल के सदस्य इस पेड़ का वानस्पतिक नाम *फाइकस बेंगालेन्सिस* है। इस पेड़ पर अंजीर जैसे असंख्य फल पकने पर लाल हो जाते हैं। हालाँकि इंसान इन्हें नहीं खाता है, पर इनके पकते ही इन पर पंछियों की जमातें आती-जाती दिखती रहती हैं। पक्षी प्रेमियों के लिए बरगद का नज़ारा इस दौरान बहुत खास होता है। खैर!

कोलकाता के इस उद्यान में लगे बोर्ड की जानकारी के अनुसार यह विशाल बरगद ढाई सौ से ज़्यादा साल पुराना है। फैलाव के हिसाब से देखें तो यह सम्भवतया पूरे एशिया महाद्वीप में पहले नम्बर पर रखा जाएगा। इस वृक्ष का स्पष्ट इतिहास तो नहीं मिलता पर हाँ 19वीं सदी की कुछ पुस्तकों में इस वृक्ष का ज़िक्र मिलता है। जानकारी तो यह भी है कि 1864 और 1867 ईस्वीं में आए भयंकर बवंडर से इस पेड़ को काफी नुकसान पहुँचा। इसकी मुख्य शाखाएँ टूट गईं। और फिर इस पर दीमक का हमला हो गया। 1925 में तो दीमक से बचाने के लिए इसके मुख्य तने को ही अलग कर दिया गया। पर यह अपनी अनेक शाखाओं के सहारे आज भी मुस्तैदी से खड़ा है। 2013 में हुई नापजोख में ज़मीन से केवल 1.7 मीटर की ऊँचाई पर मूल तने की गोलाई 16.5 मीटर थी। इस तारीख को वृक्ष की परिधि 450 मीटर थी। और सबसे ऊँची शाख 24.5 मीटर थी। एक और दिलचस्प जानकारी – इस तारीख को तने से ज़मीन तक पहुँचनेवाली जड़ों की संख्या 3618 थी।

इस विशाल बरगद का फैलाव आज भी जारी है। उद्यान सँवारनेवालों ने बताया कि अब तने की आड़ी शाखाओं से निकलनेवाली नई-नई जड़ों को मोटे-मोटे खोखले बाँसों में छोड़ दिया जाता है। इन बाँसों में खाद-मिट्टी भरी होती है। जैसे ही ये जड़ें ज़मीन में अपनी पकड़ बना लेती हैं बाँसों को तोड़कर अलग कर दिया जाता है। और फिर ये जड़ें ही तने जैसी दिखने लगती हैं। यानी आज भी यह पेड़ लगातार फैलता जा रहा है।

विशाल बरगद जब 100 साल का था

इस उद्यान में पाँच महाद्वीपों से लाए गए विदेशी मूल की ताड़ और बाँस की कई प्रजातियाँ हैं। इसी परिसर में भारत सरकार का मशहूर बॉटनिकल सर्वे ऑफ इण्डिया का ऑफिस है। हालाँकि इस दायरे में कितने ही अचरज में डालनेवाले पेड़-पौधे हैं पर आमतौर पर यहाँ आनेवाले इस विशाल बरगद के मोह में ही गिरफ्तार हुए रहते हैं। और बाकी उद्यान अनजाना रह जाता है। चकमक

एक नॉर्वेजी लड़की सोफी को अपने डाक कि डिब्बे में किसी अनजान व्यक्ति के लिखे दो खत मिलते हैं। इनमें दो ऐसे सवाल हैं कि उसकी दुनिया ही बदल देते हैं। वो उसे पिछले 3000 साल के एक दिलचस्प सफर में ले जाते हैं जहाँ अलग-अलग समय में दार्शनिकों द्वारा उठाए बुनियादी सवाल हैं। पेश है जोस्टीन गार्डनर की किताब सोफीज़ वर्ल्ड के सम्पादित अंश...

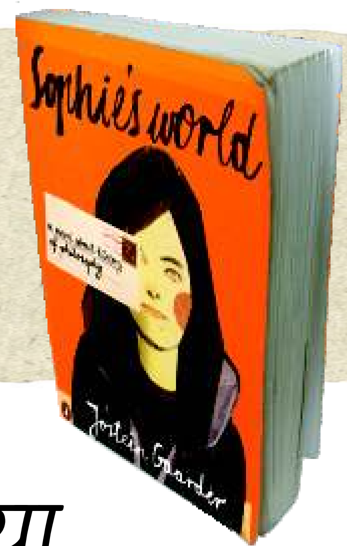

सोफीज़ वर्ल्ड

सोफी की दुनिया

पहली किस्त

जॉस्टीन गार्डनर

गेट खोलते ही सोफी एमण्ड्सन की नज़र डाक के डिब्बे की तरफ गई। रोज़ वहाँ बेकार की डाक का अम्बार लगा रहता था। कुछ बड़े लिफाफे माँ के लिए होते जो थोड़ी देर बाद खाने की मेज़ पर जमा हो जाते थे। कभी-कभार उनमें सोफी के पिता के लिए बैंक से आए पत्र भी होते। सोफी के पिता तेल के एक बड़े टेंकर में कप्तान थे। साल का अधिकाँश समय उनका बाहर ही कटता। कुछ हफ्तों के लिए जब वो आते तो घर का माहौल खुशनुमा हो जाता।

सोफी ने डिब्बा खोला। आज वहाँ एक ही लिफाफा था – वो भी सोफी के लिए। उस सफेद लिफाफे पर सोफी एमण्ड्सन, 3 क्लोवर क्लोज़ के सिवा कुछ नहीं लिखा था। न भेजनेवाले का नाम, न कोई मोहर।

अजीब बात थी! सोफी ने उसे खोला। अन्दर बस एक चिन्दी थी। जिस पर लिखा था – तुम कौन हो?

सोफी चकराई। उसने दोबारा लिफाफा पलटकर देखा। कहीं कुछ नहीं था। चिट्ठी थी तो उसी के लिए पर उसे रख कौन गया था!

थोड़ी घबराहट, थोड़ी उत्सकता से उसने गेट बन्द किया और भीतर चली गई। इस बीच उसकी बिल्ली भी जाने कहाँ से निकल कर उससे पहले वहाँ पहुँच गई थी।

◆ ◆ ◆

माँ का जब कभी मूड बहुत बिगड़ता तो वो घर को चिड़ियाघर कहते हुए कोसती। वैसे ऐसा कहना कोई बहुत गलत भी न था। सोफी के पास बिल्लियाँ, खरगोश, कछुए...न जाने कितने गैर-इंसानी जीव थे। पर ये सब उसे इसीलिए तो मुहैया हुए थे कि माँ काम से देर शाम से पहले घर आ नहीं पाती थीं और पिता को दुनिया भर के समन्दरों में चक्कर काटने में फुरसत कहाँ! तो कोई तो चाहिए था सोफी के पास...

खैर, भीतर घुसते ही सोफी ने बस्ता एक तरफ फेंका, कटोरदान में बिल्ली को खाना दिया और हाथ में चिट्ठी लिए रसोई में एक स्टूल पर बैठ गई।

तुम कौन हो?

वो क्या जाने! बेशक वो सोफी एमण्ड्सन है, पर वो कौन था जो यह सब जानना चाह रहा है! उसे कुछ सूझ नहीं पड़ रहा था।

अगर उसे सोफी की बजाय एन कुन्तरेन नाम दिया होता तो क्या वो कोई और हो गई होती? उसे याद आया पापा उसे लिलमोर नाम देना चाहते थे। सोफी कल्पना करने लगी कि वो हाथ मिला कर कह रही है, “मैं लिलमोर एमण्ड्सन।”

न न न ये कुछ ठीक नहीं लग रहा। वो कोई और ही होता जो अपना परिचय दे रहा होता।

अचानक वो कूदी और गुसलखाने में आइने के सामने खड़ी हो गई। “मैं हूँ सोफी एमण्ड्सन।”

आइने की लड़की ने अपनी तरफ से ज़रा भी हरकत न की। बस सोफी के किए को हू ब हू दोहरा दिया।

"तुम कौन हो?" सोफी ने पूछा

उस तरफ फिर कोई हरकत न हुई। एक पल को तो समझ नहीं आया कि सवाल आया कहाँ से था...सोफी की तरफ से या सामने से।

सोफी ने आइने की नाक दबाई और कहा, "तुम मैं हूँ।"

कोई जवाब न मिला तो सोफी ने घुमाकर खुद ही कहा, "मैं तुम हो।"

सोफी को अपने नाक-नक्श ज़री नहीं पसन्द। लोग जब देखो उसकी बदामी आँखों की तारीफ करते रहते हैं। पर वो इसलिए कि उसकी नाक बहुत ही छोटी है और मुँह कुछ ज़्यादा ही बड़ा। उसके कान आँखों के कुछ ज़्यादा ही पास हैं और सबसे बुरे तो उसके बाल हैं। एकदम सीधे। कितना कुछ कर चुकी है वो उन्हें घुमावदार, छल्लेदार बनाने के लिए! पर वो तो सूरदास की कारी कमरी ही बने रहे...। कभी-कभी उसे लगता कि वो जब पैदा हो रही थी तो ज़रूर कोई गड़बड़ी हुई होगी। तभी तो वो इतनी बदसूरत बनी। माँ भी तो कितनी बार उसे सुना चुकी हैं कि वो जब पैदा हो रही थी उन्हें कितनी तकलीफ हुई थी।

पर क्या इस सब का असर आपकी शक्ल-सूरत पर पड़ता है?

सच में यह कितनी अजीब है कि उसे पता ही नहीं कि वो है कौन!

और यह कितनी बेसिर-पैर कि बात वो कैसी दिखेगी इसमें उसके कहे-सोचे की कोई जगह ही नहीं! उसके नाक-नक्श उस पर बस थोप दिए गए हैं। वो अपने दोस्त तो चुन सकती है, पर खुद को नहीं। उसने तो इंसान होना भी नहीं चुना।

और इंसान होना यानी क्या?

सोफी ने फिर से आइनेवाली लड़की को देखा।

"फालतू में इतना समय बर्बाद हो गया," बड़बड़ाती हुई सोफी हॉल में पहुँची। वहाँ आकर लगा बाहर बगीचे में जाया जाए। और वो "बिल्ली बिल्ली बिल्ली...कहाँ है?" की टेर लगाती हुई बाहर आ गई।

अचानक उसे लगा जैसे वो कोई गुड़िया है जो जादू की छड़ी से ज़िन्दा हो गई है। इस दुनिया में अभी और इसी वक्त ज़िन्दा होना, इतनी सारी अनूठी चीज़ों को देख-सुन-छू पाना... कितना अद्भुत है सब!

उसी वक्त उसकी बिल्ली शेरकन उछलकर सामने आई और पास की घनी झाड़ियों में गायब हो गई। सोफी ने सोचा, "शेरकन भी अभी इसी दुनिया में है, पर क्या उसे इस बात का वैसा एहसास है जैसा मुझे है? क्या मौत के बाद भी जीवन है?" खुशकिस्मती से बिल्ली इस सवाल से भी बची हुई है।

सोफी अब अपने ज़िन्दा होने पर सोचने लगी। पर जैसे ही वो इस पर सोचती उससे चिपका यह ख्याल भी चला आया कि वो यहाँ हमेशा के लिए नहीं है। आज है, पर एक दिन नहीं होगी। इसे भुलाने के लिए उसने अपना पूरा ध्यान अपने अभी ज़िन्दा होने पर लगाया। पर कर नहीं पाई। मौत का ख्याल पीछा नहीं छोड़ रहा था। सोफी सोचने लगी कि यह तो बड़ी नाइंसाफी है कि जीवन को एक दिन खत्म होना ही है।

वैसे देखा जाए तो इसका उलट भी होता ही है। एक दिन हम सब मर जाएँगे इस बाद को हम जितनी शिद्दत से महसूस करते हैं, उतनी ही शिद्दत से हम जान पाते हैं कि आज हमारा ज़िन्दा होना कितनी बड़ी नेमत है जो हमें हासिल है।

सोफी को अपनी दादी की एक बात याद हो आई। जब डॉक्टर ने उन्हें उनकी बीमारी के बारे में बताया था तब वो बोली थीं, "आज से पहले मुझे एहसास तक नहीं हुआ था कि यह जीवन कितना कीमती, कितना शानदार है।"

यह कितनी बड़ी ट्रेजेडी है ना कि ज़्यादातर लोगों को इतना बीमार होने के बाद ही पता चल पाता है कि ज़िन्दा रहना कितनी बड़ी नेमत है। या फिर उनके डाक के डिब्बे में पड़ी एक चिट्ठी यह काम कर जाती है।

अचानक उसे ख्याल आया कि क्या पता कोई और चिट्ठी उसके इन्तज़ार में हो। और वो भागकर गेट के पास पहुँची। वहाँ एक और सफेद लिफाफा था। उसने उसे फटाफट खोला। वहाँ लिखा था–

यह संसार कहाँ से आया है?

मुझे क्या पता? किसी को भी नहीं पता होगा! पर हाँ, ये सवाल तो सही लग रहा है। पहली बार सोफी को लगा कि इस दुनिया में जिए जाना बिना यह पड़ताल किए कि यह आई कहाँ से है, ठीक बात नहीं है।

उसका दिमाग चकरघिन्नी हो गया था। उसने सोचा कि चलो अपनी खोह ही में बैठा जाए। जब भी वो बहुत खुश, बहुत नाराज़, बहुत बेबस होती तो इस जगह का उसे बड़ा आसरा मिलता। बगीचे में बेतरतीब बढ़ती, फैलती झाड़ियों की बाढ़ थी। सालों से इसकी छटाई नहीं हुई थी। इसी बाढ़ में उसकी यह छिपी हुई खोह थी – उसकी अपनी सीक्रेट जगह।

वहाँ घुसते ही उसने दोनों लिफाफों को फिर से पढ़ा। यह संसार कहाँ से आया है...

सोफी इतना तो जानती थी कि पूरे ब्रह्माण्ड में हमारी पृथ्वी बस एक छोटा-सा ग्रह है। पर ब्रह्माण्ड कहाँ से आया?

हो सकता है यह हमेशा से रहा हो। पर क्या कोई चीज़ ऐसी हो सकती है जिसका अस्तित्व हमेशा से रहा हो?

सोफी के भीतर कुछ था जिसने इसे मानने से सरासर इंकार कर दिया। जो भी चीज़ आज है उसकी कोई तो शुरुआत रही ही होगी। यानी ब्रह्माण्ड भी किसी और चीज़ से जन्मा होगा।

पर अगर ब्रह्माण्ड किसी और से जन्मा होगा तो वो कोई और चीज़ भी तो किसी और से जन्मी होगी।

... पर कभी तो ऐसा हुआ होगा कि कोई चीज़ "कुछ नहीं" से जन्मी होगी? पर क्या यह सम्भव है?

क्या यह उतना ही असम्भव नहीं जितना यह विचार कि यह दुनिया हमेशा से रही आई है।

शेरकन बिल्ली भी अभी इसी दुनिया में है, पर क्या उसे इस बात का वैसा एहसास है जैसा मुझे है?

उसने स्कूल में पढ़ा था कि इस संसार को ईश्वर ने रचा है। सोफी ने खुद को तसल्ली दी कि शायद इस पूरी समस्या का यही सबसे बढ़िया हल हो सकता है। पर क्या वो इस पर यकीन करेगी! अगर ऐसा है तो फिर ईश्वर को किसने रचा! क्या उन्होंने खुद को "कुछ नहीं" से रचा?

पर उसके अन्दर कुछ था जो इसे मानने को कतई तैयार न था। चलो मान भी लें कि ईश्वर ने सब को रचा, पर खुद को रचने से पहले कोई "खुद" तो होना ही चाहिए ना जिससे रचा जाया जा सकता है। तो अब एक ही सम्भावना बची थी – यह मानना कि ईश्वर का अस्तित्व हमेशा से ही था। पर इस सम्भावना को तो वो पहले ही खारिज कर चुकी है। जिस भी चीज़ का आज अस्तित्व है उसकी कोई शुरुआत तो होनी ही चाहिए।

उसने फिर से दोनों खत खोले –

तुम कौन हो?

ये संसार कहाँ से आया है?

क्या खिजानेवाले सवाल हैं दोनों! और ये खत आए कहाँ से हैं? यह भी तो कम तिलिस्म नहीं। सोफी के अन्दर खलबली मची थी। जैसे ही उसने डाकिए को देखा वो गेट के पास भागी। माँ की डाक, किताबों, अखबारों के नीचे फिर एक बार एक लिफाफा था। धड़कते दिल से उसने उसे उठाया। उस पर UN Battalion की मोहर लगी थी। पापा का तो हो नहीं सकता। वो तो किसी दूसरी जगह पर रहते हैं। वो उनकी लिखाई भी नहीं है।

लिफाफे पर लिखा था –

Hilde Moller,
c/o Sophie Amundsen,
3 Clover Close

अन्दर लिखा था –

प्रिय हिल्डी,

तुम्हें तुम्हारा पन्द्रहवाँ जन्मदिन मुबारक हो। इस मौके पर मैं तुम्हें एक ऐसा तोहफा देना चाहता हूँ जो तुम्हें हमेशा बढ़ते रहने में मदद करेगा। माफ करना इसे मैं तुम तक सोफी की मार्फत पहुँचा रहा हूँ। यही सबसे आसान तरीका था।

बहुत प्यार
पापा

सोफी एक बार फिर रसोई की ओर भागी। अब ये हिल्डी कौन आ गई जिसका जन्मदिन उसके अपने जन्मदिन से ठीक एक महीना पहले पड़ रहा है?

उसने टेलिफोन डायरेक्ट्री छान मारी। हिल्डी मॉलर नाम कहीं न मिला।

जब जन्मदिन हिल्डी का है तो तोहफा सोफी को क्यों भेजा? कैसे पापा हैं अपनी ही बेटी को उल्लू पटा रहे हैं। अब मुसीबत यह कि हिल्डी नाम की इन मोहतरमा को मैं ढूँढूँ कहाँ! कैसे!

दो घण्टे के अन्दर कितना तूफान मच गया है मेरी ज़िन्दगी में। तीन-तीन सवाल मुँह बाए खड़े हैं। सोफी को पूरा यकीन है कि इन तीनों के तार आपस में कहीं न कहीं जुड़े हुए हैं। और होना भी चाहिए क्योंकि आज तक सोफी एकदम साधारण ज़िन्दगी जीती आई है। चक मक

जारी...

चित्रः शिवांगी सिंह

माथापच्ची

1 रेहान की आदत है कि वो महीने की तारीख के हिसाब से पैसा खर्च करता है यानी 10 तारीख को 10 रुपए, 12 तारीख को 12 रुपए...। एक बार उसने लगातार 5 दिन में 63 रुपए खर्च किए। तो बताओ ये पैसे किन तारीखों में खर्च किए होंगे।

2 बरामदे में दो बच्चे बैठे हैं - एक लड़का और एक लड़की। काले बालवाले बच्चे का कहना कि वह लड़का है और भूरे बालवाला कहता है कि वह लड़की है। यदि दोनों में से कम से कम कोई एक झूठ बोल रहा हो तो बताओ कि लड़का कौन है और लड़की कौन।

3 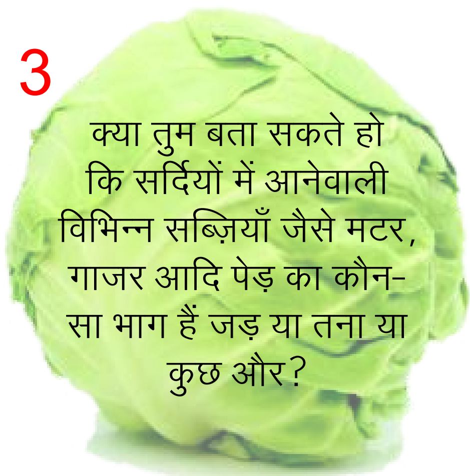

क्या तुम बता सकते हो कि सर्दियों में आनेवाली विभिन्न सब्ज़ियाँ जैसे मटर, गाजर आदि पेड़ का कौन-सा भाग हैं जड़ या तना या कुछ और?

4 जलती हुई मोमबत्ती या तीली को अगर हम लेकर चलें तो शुरू में उसकी लौ पीछे की ओर झुकेगी। यदि हम लौ को हाथ से ढँकते हुए ले जाएँ तो लौ किस दिशा में झुकेगी?

नवंबर की चित्र पहेली हल

को	ह	रा		डो		ओ	ट	ला
य			थ	र	म	स		ठी
ला	ल	टे	न		ट		ड	
		ली		ह	र	सिं	गा	र
क	ठ	फो	ड़	वा		ह	ल	
न		न		ई	ख			अ
ख			बी	ज		घ	रौं	दा
जू	ड़ा			हा	व	ड़ा		ल
रा		क	मी	ज़			खे	त

5 दो कारें **क** बिन्दु से **ख** बिन्दु की ओर जा रही हैं। दोनों समान गति से एक ही रास्ते पर हैं इसलिए **ख** बिन्दु तक पहुँचने में बराबर समय लगना चाहिए। पर एक कार दूसरी से 45 मिनट बाद पहुँचती है। भला क्यों?

- छूने में शीतल, सूरत में लुभावनी रात में मोती और दिन में पानी (ओस)
- बेशक ना हो हाथ में हाथ पर रहती है वो सबके साथ (परछाईं)
- दो किसान लड़ते जाएँ, उनकी खेती बढ़ती जाए (कलम और कागज़)
- छोटा-सा फकीर, पेट में लकीर (गेहूँ)

सुख सहजसिंह, चौथी,
डीपीएस, लुधियाना

जश ढोका,
डीपीएस पूना

बोलीरंगोली

दिन जो क्रिसमस का है जन्म जीसस का है

कवि गुलज़ार की इस पँक्ति पर तुम्हारे हज़ार से ऊपर ही चित्र मिले। पर ज़्यादातर में वही दृश्य थे जो अकसर किताबों में दिख जाते हैं। गुलज़ार साब को इनमें से सिर्फ चार चित्र पसन्द आए। इसके अलावा कुछ और चित्र हैं जो बेहतर हैं। इनके चित्रकारों को उपहार में चकमक डायरी अथवा किताबें भेजी जा रही हैं।

जनवरी की कविता सुनो -
दो हज़ार पन्द्रह सालों के बाद आया एक साल
तीन सौ पैंसठ दिन जीना है अच्छे तरह से पाल

पंकज राठौर,
सातवीं, के वी एस
शाजापुर

जनवरी की कविता सुनो -

दो हज़ार पन्द्रह सालों के बाद आया एक साल
तीन सौ पैंसठ दिन जीना है अच्छे तरह से पाल

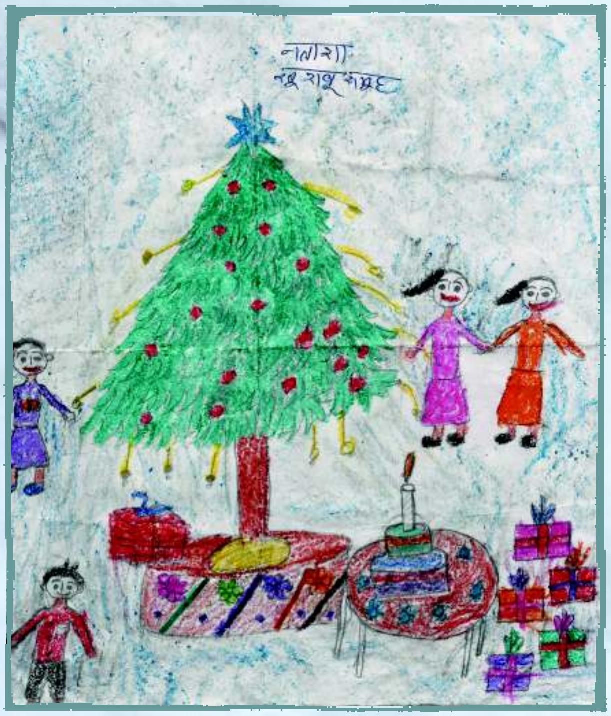

नताशा, खुशबू समूह, दिगन्तर, जयपुर

सनाचार्या, चौथी, डीपीएस लुधियाना

पुष्टि गोयल, चौथी, डीपीएस, लुधियाना

श्रेया, पाँचवीं, बालभवन किलकारी पटना

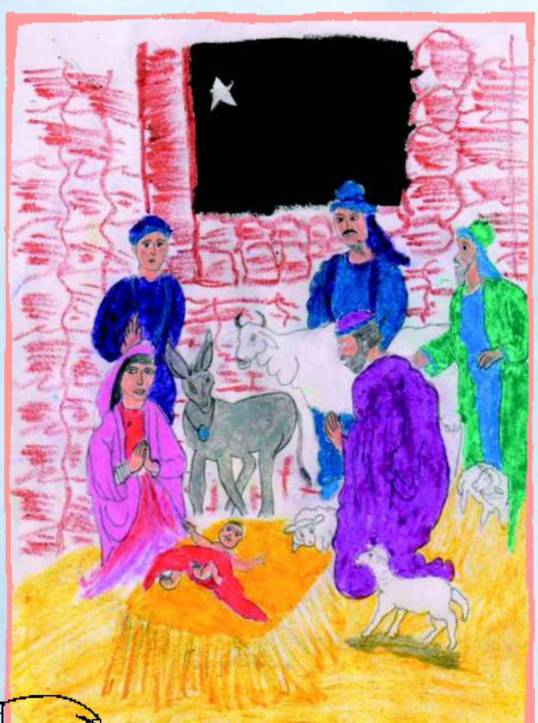

बोलीरंगोली

भूमिका, आठ साल,
आनन्द निकेतन स्कूल
भोपाल

तान्या साहू, सातवीं, आनन्द विहार, भोपाल

नेमत, पाँचवीं, डीपीएस, लुधियाना

दिन जो क्रिसमस का है
जन्म जीसस का है

लक्ष्य तलवार, चौथी, डीपीएस लुधियाना

सिद्धान्तराज वर्मा, ग्यारहवीं, बालभवन किलकारी पटना

नैयल प्रकाश, पाँचवीं, जिंगलबैल स्कूल फैज़ाबाद, उ प्र.

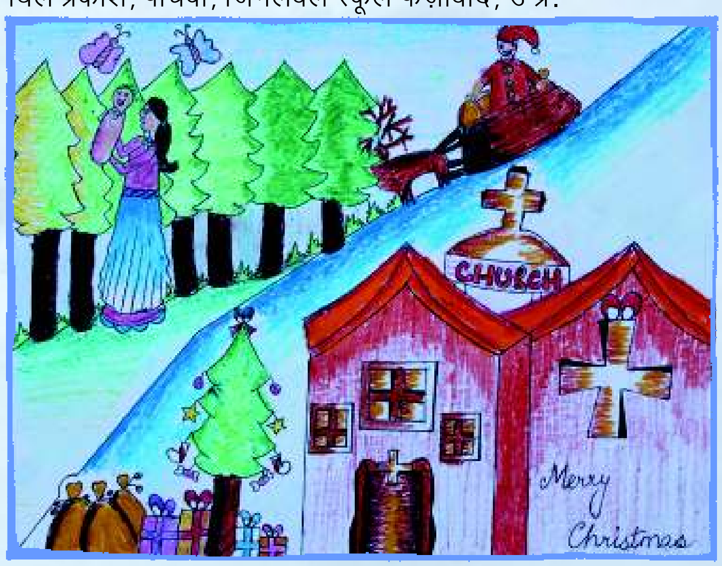

हो सकता है बड़े तुम्हें इसके अर्थ बताएँ। उनके अर्थ सुनो-समझो पर चित्र अपने मन का ही बनाओ...। कोशिश करना कि तुम्हारा चित्र हमें **15 दिसम्बर** तक मिल जाएँ। चित्र के साथ अपना पता, कक्षा, फोन नम्बर ज़रूर लिखना। पता है -

चकमक, एकलव्य,
ई-10, शंकर नगर, शिवाजी नगर, भोपाल -16
(फोन - 09425010115) चाहो तो ईमेल कर दो chakmak@eklavya.in

अम्बर, नौ साल, आनन्द निकेतन स्कूल, भोपाल

पौलमी प्रजापति, पाँचवीं, डीपीएस, तापी

बीहू, दस वर्ष,
आनन्द निकेतन
भोपाल

दिन जो क्रिसमस का है
जन्म जीसस का है

बोलीरंगोली

श्रेया वर्मा, जेबीएस, फैज़ाबाद, उ.प्र.

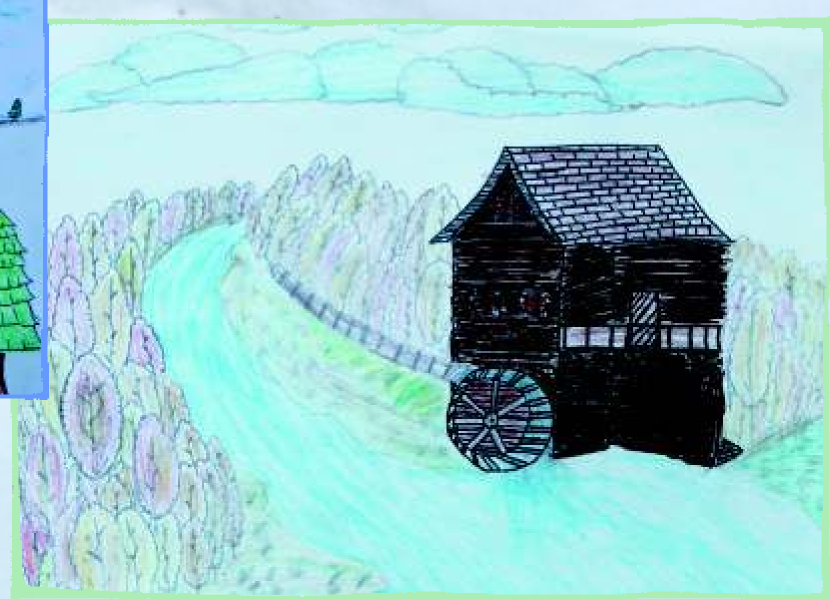

शमन नेगी, छठी,
जेजे स्कूल, किन्नूर,
हिमाचल प्रदेश

धुएँ पे पानी

मधु कांकरिया

करीब पचास साल पहले की बात है। कोलकाता शहर का बड़ा बाज़ार इलाका तब शहर का सबसे घनी आबादीवाला इलाका था। आज की तरह तब फ्लैट नहीं होते थे। खुले घर और घरों के बाहर आँगन हुआ करते थे। वहीं पर दो पड़ोसी रहा करते थे। एक नीचे के तल्ले में रहता था जिसका नाम रामप्रसाद था। दूसरा ठीक उसके ऊपर रहता था। जिसका नाम गंगाप्रसाद था। तब आज की तरह रसोई गैस नहीं थी। लोग चूल्हे पर खाना पकाया करते थे। चूल्हे में कोयला जलाते थे जिससे बहुत धुआँ उठता था। रामप्रसाद जब भी चूल्हा जलाता उसका धुआँ गंगाप्रसाद के घर में इस कदर भर जाता कि उसके बच्चे पढ़-लिख नहीं पाते थे। उसकी बूढ़ी माँ का खाँसते-खाँसते बुरा हाल हो जाता। वह कई बार रामप्रसाद से विनती करता कि भाई रामप्रसाद तुम चूल्हे का मुँह मेरे घर की तरफ न कर सड़क की तरफ कर दिया करो। इसके धुएँ से मेरी माँ बीमार पड़ जाती है। बच्चे पढ़-लिख नहीं पाते हैं। रामप्रसाद इसका मज़ा लेते हुए कहता, “गंगा भाई मैं इसमें क्या कर सकता हूँ। धुएँ का तो स्वभाव ही है ऊपर उठना। धुआँ तो ऊपर ही उठता है। मैं इसमें क्या कर सकता हूँ। इसे रामजी का प्रसाद समझ स्वीकार करो।” गंगाप्रसाद कुछ बोल नहीं पाता।

इसी तरह परेशानी में दिन बीत रहे थे कि एक बार गंगाप्रसाद का छोटा भाई श्याम उससे मिलने आया। सुबह घर फिर धुएँ से भर गया। उसकी बूढ़ी माँ का खाँसते-खाँसते बुरा हाल हो गया। खुद श्याम परेशान हो गया। जब तक घर में धुआँ भरा रहा वह कोई काम नहीं कर सका। ठीक से साँस तक नहीं ले पाया। श्याम ने गंगाप्रसाद से कहा, “भैया यह क्या? कितना हानिकारक है यह धुआँ! मना क्यों नहीं करते पड़ोसी को? क्या हाल कर रखा है धुएँ ने सबका।”

गंगाप्रसाद ने सारी कहानी उसे सुना दी। उसने गंगाप्रसाद से कहा, “तुम चिन्ता मत करो।” “उसने रामप्रसाद के घर को चारों तरफ से देखा और अगली सुबह होते ही उसने ऊपर से पानी का पाइप नीचे उसके घर की तरफ छोड़ दिया। खुले आँगन में सूख रहे रामप्रसाद के सारे कपड़े भीग गए। आँगन में सूखती बड़ियाँ भीग गईं। दौड़ता हुआ वह भीतर से आँगन में आया और नीचे से चीखा, “बेवकूफ! यह क्या कर रहे हो? पानी क्यों गिरा रहे हो? देखो मेरे सारे कपड़े भीग गए, बड़ियाँ भीग गईं।” श्याम ऊपर से बोला, “भाई, मैं इसमें क्या कर सकता हूँ? पानी का तो स्वभाव ही है नीचे गिरना। इसे गंगा का प्रसाद समझ स्वीकार करो।” रामप्रसाद को बात समझ में आ गई।

दूसरे दिन से धुआँ आना बन्द हो गया।

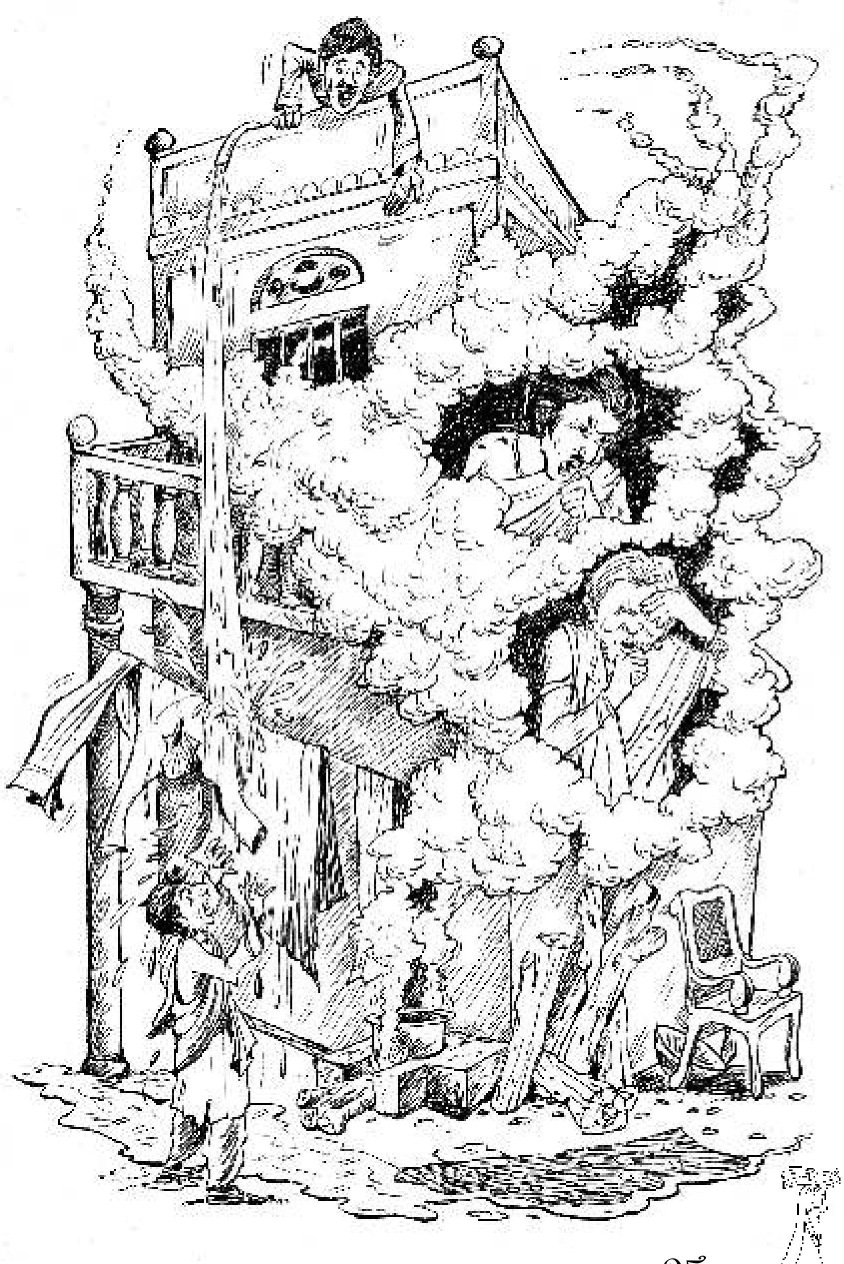

चित्रः प्रशान्त सोनी

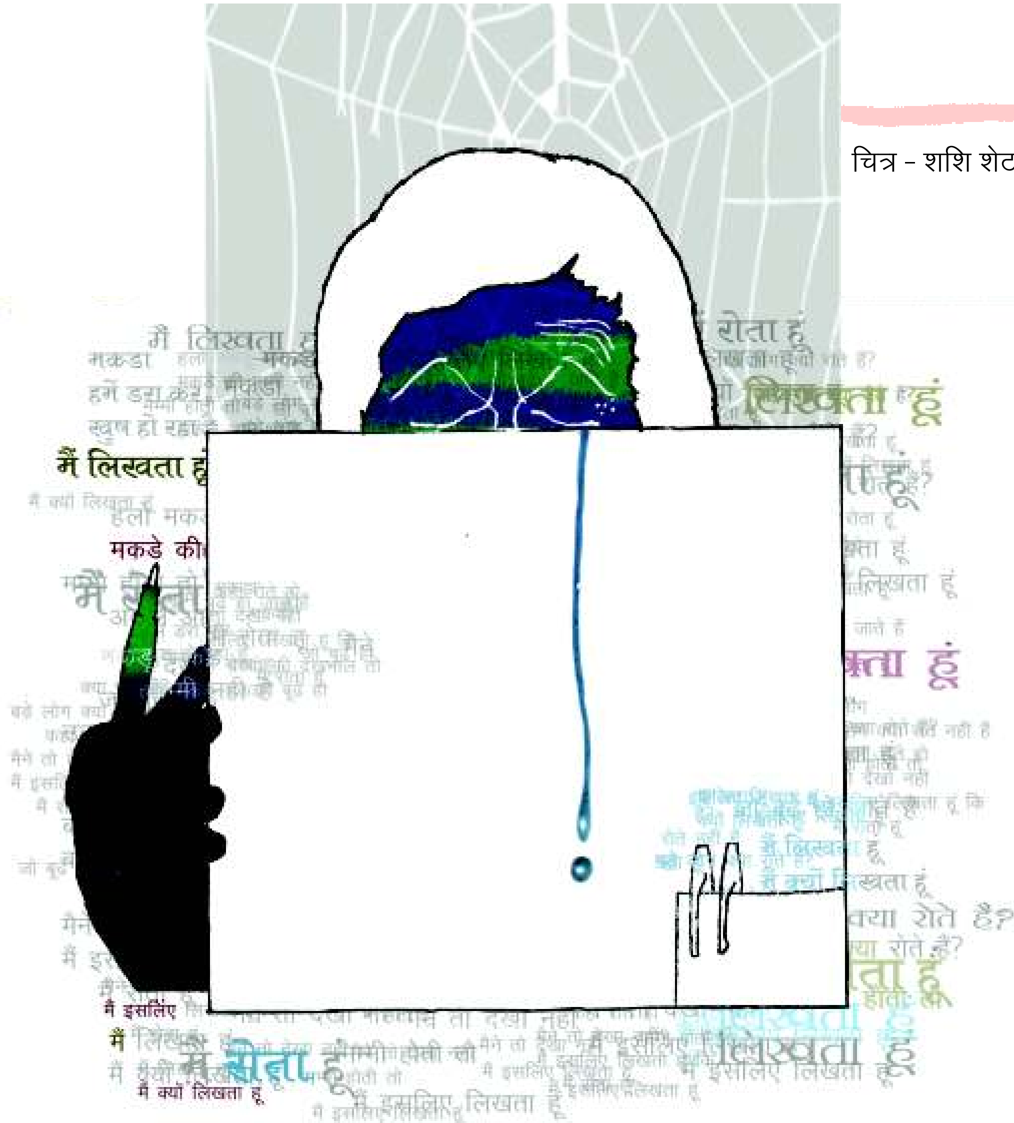

चित्र - शशि शेटये

रोते हो, इसलिए लिखते हो

लाल्टू

राधिका की ओर देखते ही मेरी नज़र दरवाज़े के ऊपर दीवार पर गई। वहाँ एक मकड़ा था। लगा जैसे वह छलाँग मारने को है। मैंने कहा, "अरे! देखना, ऊपर एक मकड़ा है।"

राधिका घबराती-सी जल्दी में आगे बढ़ आई। उसने सँभलते हुए चाय नीचे रखी। फिर हम सब मकड़े की ओर देखने लगे। मकड़ा भी शायद हमें देख रहा था। वह उछला नहीं। मैंने कहा, "देखो! कैसे देख रहा है! हमें डराकर खुश हो रहा है?"

सुनते ही, लाल्टू तुरन्त बोला, "आपको कैसे मालूम कि वह खुश हो रहा है?"

मैं समझ नहीं पा रहा था कि क्या कहूँ। लाल्टू आगे बढ़कर दरवाज़े तक गया और उछलकर मकड़े से कहा, "हलो, मकड़ू-वकड़ू।" और वह उछलता रहा।

मैंने कहा, "अरे, ऐसे क्यों कर रहे हो?"

उसने कहा, "तुम्हें एक बात बतलाऊँ?"

"हाँ, बतलाओ।"

"इस मकड़े की न, मम्मी नहीं है।"

"तुम्हें कैसे मालूम?"

उसने मेरी ओर ऐसे देखा कि मैं कैसा आदमी हूँ, जिसे इतनी-सी बात भी नहीं मालूम है! "मम्मी होती तो उसको ऐसे अकेले-अकेले यहाँ आने थोड़े देती?"

वाजिब बात थी। मैंने कहा, “पर वह बच्चा थोड़े ही है। वह तो बड़ा मकड़ा है।”

वह सोच में पड़ गया और फिर बोला, “तुम्हें एक बात बतलाऊँ?”

“हाँ, बतलाओ।”

“अनि पता है क्या कहता है?”

“अनि कौन?”

राधिका दूसरे कमरे चली गई थी। वहीं से हमारी बातें सुन रही होगी। उसने दूर से ही कहा, “अनि इसके स्कूल में पढ़ता है।”

“तो, क्या कहता है अनि?”

वह अचानक हँसने लगा था और दरी पर हँसते-हँसते लोट रहा था। “अनि ने ना, मैम से पूछा कि बच्चों की देखभाल तो बड़े करते हैं, पर जो बड़े होते हैं, जो बूढ़े हो जाते हैं, उनकी देखभाल कौन करता है?”

“तो इसमें हँसने की क्या बात है? सही सवाल है। तो मैम ने क्या कहा?”

पर उसने मेरे सवाल पर ध्यान नहीं दिया। झल्लाते हुए उसने पूछा, “बड़ों की भी कोई देखभाल करता है? बड़े लोग क्या रोते हैं?”

“तो तुम्हें क्या लगता है सिर्फ उन्हीं की देखभाल करते हैं, जो रोते हैं। तुम्हारी देखभाल क्या तभी होती है, जब तुम रोते हो?”

पर वह वहीं अटक गया था। “बड़े लोग रोते नहीं हैं?”

“अरे हाँ भाई, बड़े भी रोते हैं।”

“तुम रोते हो?”

“हाँ, रोता हूँ।”

“कहाँ रोते हो, मैंने तो देखा नहीं!”

मैंने नकली रोने का नाटक किया। थोड़ी देर वह भौंचक था। फिर चिल्लाकर बोला, “तुम ऐसे ही कर रहे हो, तुम रो नहीं रो रहे हो।” वह पास आकर मेरे कँधे पर मुक्के मारने लगा।

अचानक मुझे एक बात सूझी। मैंने कहा, “तुम उस दिन पूछ रहे थे न कि मैं लिखता क्यों हूँ? मैं इसलिए लिखता हूँ कि मैं रोता हूँ।”

अब तो वह चुप हो गया। उसे समझ नहीं आया कि मैंने क्या कहा था। फिर वह धीरे-धीरे बोला, “तुम रोते हो, इसलिए लिखते हो?”

क्रिसमस का तोहफ़ा

(पेज 13 का शेष भाग)

अमपारा काफी दिनों तक उदास रही। अनायास ही उसका हाथ सर पर पहुँच जाता। गँजे होने का एहसास उसे रुला देता कैफे में अब तो ग्राहक भी कहने लगे थे, “ए गँजी, कॉफी लाओ।” प्लेटें टूटीं, मालकिन ने पीटा, उसने सह लिया मगर सुनहरे बाल काटने का उसे क्या हक था! यह सवाल वह सिर्फ माँ से करती। मारिया तसल्ली देती कि जल्द ही बाल बड़े हो जाएँगे। क्रिसमस तक तो पता भी नहीं चलेगा कि कभी कटे भी थे। फिलहाल मारिया उसके लिए एक पुराना हैट ले आई। अब वह अपना सर हर समय हैट से ढँके रहती। उसका बस चले तो सोते वक्त भी हैट न उतारे। मगर सोने का वक्त मिले तो। दिन में कैफे, शाम को माँ के साथ खाना पकाने से लेकर भाण्डे-बर्तन और कपड़े-लत्ते होना और फिर रात से अलस्सुबह तक माँ के साथ दुकान सम्भालना। बस सुबह पाँच से आठ बजे तक सोने को मिलता। दिन-महीने-साल यूँ ही उनीन्दी आँखों में गुज़र रहे थे और बस एक ही ख्वाहिश रह गई थी कि किसी दिन ऐसा सोए कि दिन गुज़र जाए और रात का भी पता न चले।

क्रिसमस के दिन आ गए। कैफे में भी काम बढ़ गया। अब अमपारा बिना नुकसान किए काम करती। वह अपनी सज़ा नहीं भूली थी। उसके बाल भी बड़े हो गए थे। मालकिन को भी एहसास हो गया था कि उसने इस बच्ची के परियों जैसे बाल काटकर ज़्यादती की है। उसने कहा तो कुछ नहीं मगर अमपारा को एक खूबसूरत रिबन भेंट कर शायद पश्चाताप ही किया था। अमपारा हर वक्त उसे बाँधे रहती। क्रिसमस पर मालकिन ने उसकी पसन्द पूछी। “बताओ तुम्हें क्या चाहिए। फ्रॉक या जूते या स्वेटर?” अमपारा बोली, “मुझे एक दिन सोने की इजाज़त दे दो।”

चुप रहो

(कवर एक की कविता)

- पाब्लो नेरूदा

अब हम बारह तक गिनती गिनकर
एकदम शान्त हो जाएँगे

कम-से-कम एक बार पृथ्वी पर,
कोई किसी भी भाषा में न बोले,
और केवल एक सेकेण्ड के लिए,
हाथ बिना हरकत थमा रहे

वो अनूठा पल
जब न भीड़ होगी, न इंजन होंगे;
हम सब एक-साथ होंगे,
अचानक एक नएपन में

ठण्डे समन्दर में मछुआरों से बेखौफ
व्हेल मछलियाँ घूमा करेंगी;
और नमक चुनते मज़दूर
अपने हाथों के ज़ख्म देख पाएँगे

जो युद्ध की तैयारियों में जुटे हैं,
ज़हरीली गैस से, और आग से जंग,
जहाँ सर्वनाश के बाद ही विजय मिलती है,
वो लोग साफ-सुथरे कपड़े पहनकर
छाँव में अपने भाई-बन्धुओं के साथ
यूँ ही घूम सकेंगे

मैं जो कह रहा हूँ उसे
निठल्लई न समझ बैठना

उसका ताल्लुक ज़िन्दगी से है;
मृत्यु से मुझे कुछ लेना-देना नहीं

काश हम इतने मन से
ज़िन्दगी की भाग-दौड़ में शामिल न होकर
कभी रुककर, कुछ नहीं करते,

तब शायद एक लम्बी चुप्पी
हमारे इस दुख को थाम लेती
कि हम खुद को कितना कम जानते हैं
और खुद को लगातार मृत्यु से धमकाते हैं

शायद धरती हमें यह सबक सिखा सके
कि जब सब कुछ मरा-मरा दिखता है
वो बाद में जीवन्त साबित होता है

अब मैं बारह तक गिनती गिनूँगा
आप शान्त रहें फिर मैं चला जाऊँगा

पिछले अंक में एक गतिविधि दी गई थी जिसमें कुछ ऊँचाई में रखे एक बर्तन से सूती रस्सी से पानी खींचना था। इसमें भागीदारी के लिए शुक्रिया। अंकुश गुप्ता बता रहे हैं कि ऐसा हो कैसे पाया...

प्रिय दोस्तो,

तुम में से कइयों ने आखिर ऊँचाई पर रखी बालटी के पानी को सूत की रस्सी से खींच ही लिया। और कई तो इस तरह से गन्दे पानी को साफ भी कर पाए। खुशी हुई कि तुमने इसके कारण भी खोजने की कोशिश की। कुछ ने कहा सूती धागा पानी को सोख लेता है और कुछ ने गुरुत्वाकर्षण बल को इसके लिए ज़िम्मेदार पाया।

तुम सबका सोचना काफी हद तक सही है। सूत के रेशों की पानी को सोखने की प्रवृत्ति को कैपिलरी बल से समझा जा सकता है। यह पानी और सूत के अणुओं के बीच आकर्षण के कारण होता है। इसी बल के कारण दीयों में तेल सूत की बाती में ऊपर चढ़ पाता है। गुरुत्वाकर्षण से इस प्रक्रिया में मदद मिलती है। और पानी नीचे रखे बर्तन में लगातार बहने लगता है। अगर खाली बर्तन को भरे बर्तन से ऊपर रखा गया होता तो रस्सी तो पूरी गीली हो जाती लेकिन दूसरे बर्तन में पानी नहीं भरता। माइकल फैरेडे ने ब्रिटेन में 1860-1870 के दौरान क्रिस्मस की छुट्टियों में कई भाषण दिए थे कि मोमबत्ती कैसे जलती है। ये काफी प्रसिद्ध हुए थे। बाद में इन्हें प्रकाशित भी किया गया था। मुझे इस गतिविधि के बारे में उन लिखित भाषणों से ही पता चला।

एक बात और इस प्रक्रिया से पानी में से सभी तरह के पदार्थ अलग नहीं किए जा सकते हैं। जब पानी सूत के धागों से होकर गुज़रता है तो उन धागों की बारीक नलियों में से मिट्टी के महीन कण निकल जाते हैं पर थोड़े बड़े कण नहीं निकल पाते। घुलनशील पदार्थ निकल पाते हैं परन्तु कुछ मोटे जीव नहीं निकल पाते। महीन जीवाणु धीरे-धीरे रस्सी का सफर पूरा करते हुए दूसरे बर्तन में पहुँच जाते हैं। यानी रस्सी भी बारीक छलनी की तरह काम करती है।

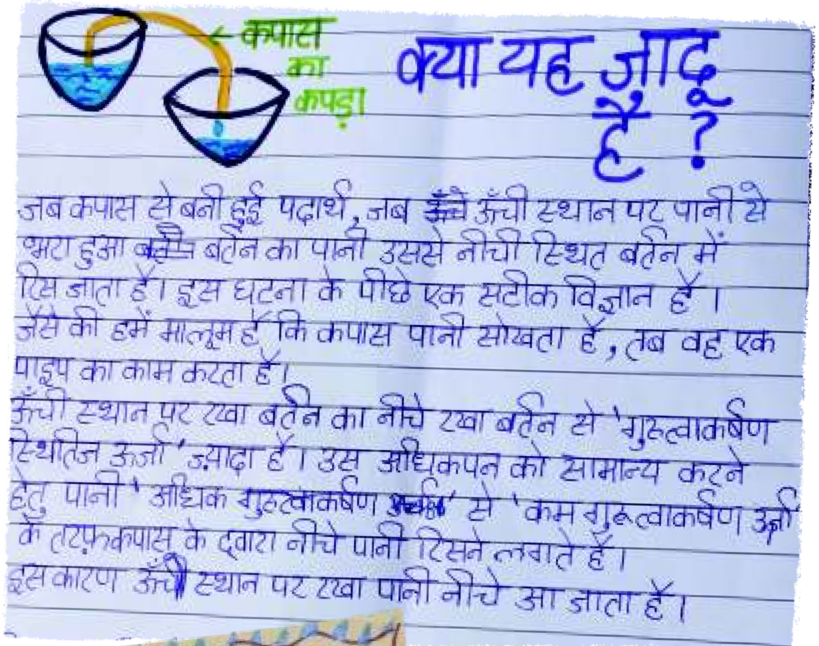

– अंकित झा

– नवरूप कौर गुमान

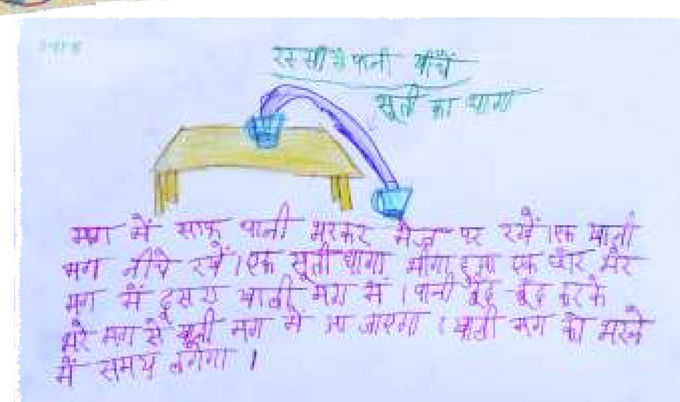

– कोमल कौर खुराना

तो इस तरह तुम्हारे पास पानी को कुछ हद तक साफ करने का एक आसान तरीका है।

– सार्थक राज, अंकित झा, सृष्टि बैनर्जी, किशिका सिंह सभी आठवीं, डीपीएस पटना

– नवरूप कौर गुमान, चौथी, कोमल कौर खुराना, और नैतिक बंसल तीसरी, डीपीएस लुधियाना

इस बार की गतिविधि

अपने आसपास से दो-तीन जगहों (बगीचे, रास्ते, खेत कहीं की भी) से थोड़ी-थोड़ी मिट्टी ले लो। इन्हें अलग-अलग बर्तनों में रखकर इसमें पानी मिला लो। पानी केवल इतना ही हो कि मिट्टी पूरी तरह से भीग जाए। अब मिट्टी-पानी के इस घोल को किसी डण्डी से अच्छा तरह चला लो ताकि इसमें हवा का कोई बुलबुला फँसा न रह जाए। फिर इसमें थोड़ा-सा निम्बू का रस या सिरका डाल दो। मिट्टी में से छोटे-छोटे बुलबुले निकलने लगेंगे। क्या तुम्हारी मिट्टी के घोल से भी बुलबुले निकले? किस मिट्टी से सबसे ज़्यादा निकले? तुम्हारा क्या ख्याल है ये किस गैस के बुलबुले होंगे?

दोस्त नौवीं किस्त

चित्रकल्पना : शशिकिरण

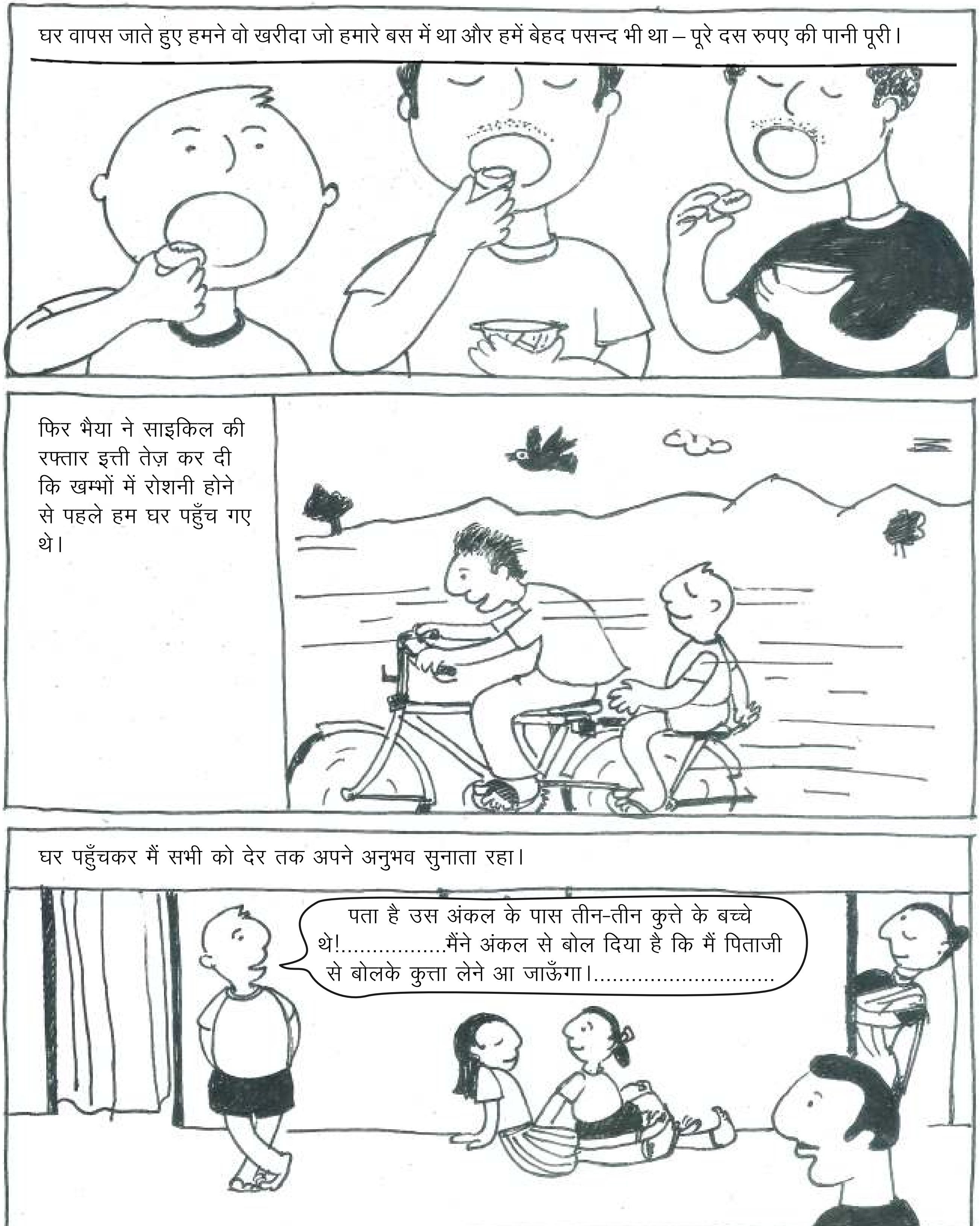

पर मेरी सिफारिश का पिताजी पर ज़्यादा असर नहीं पड़ा। बात आगे ही नहीं बढ़ी। पर मुझे यकीन था कि कोई न कोई रास्ता निकल ही जाएगा। इसी बीच मेरी दिलचस्पी कुत्तों से जुड़ी किताबों में हुई। और मैं लाइब्रेरी से ऐसी किताबें लेकर पढ़ने लगा।

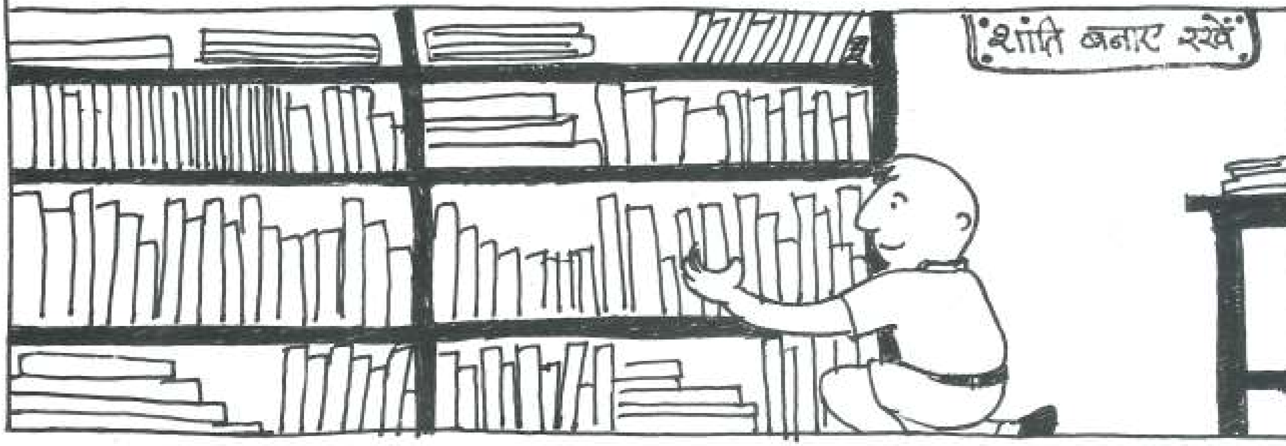

मैं जितना उनके बारे में पढ़ता गया मेरी उत्सुकता उनमें और बढ़ती गई।

अब तो मुझे जब-जहाँ मौका मिलता कुत्तों के बारे में अपना ज्ञान बघारने लगता। इतना कि मुझे जाननेवाले कुत्ते का नाम से ही डरने लगे थे...

मेरे इस पागलपन से मेरे परिवार के लोग अब नाराज़ नहीं होते थे।

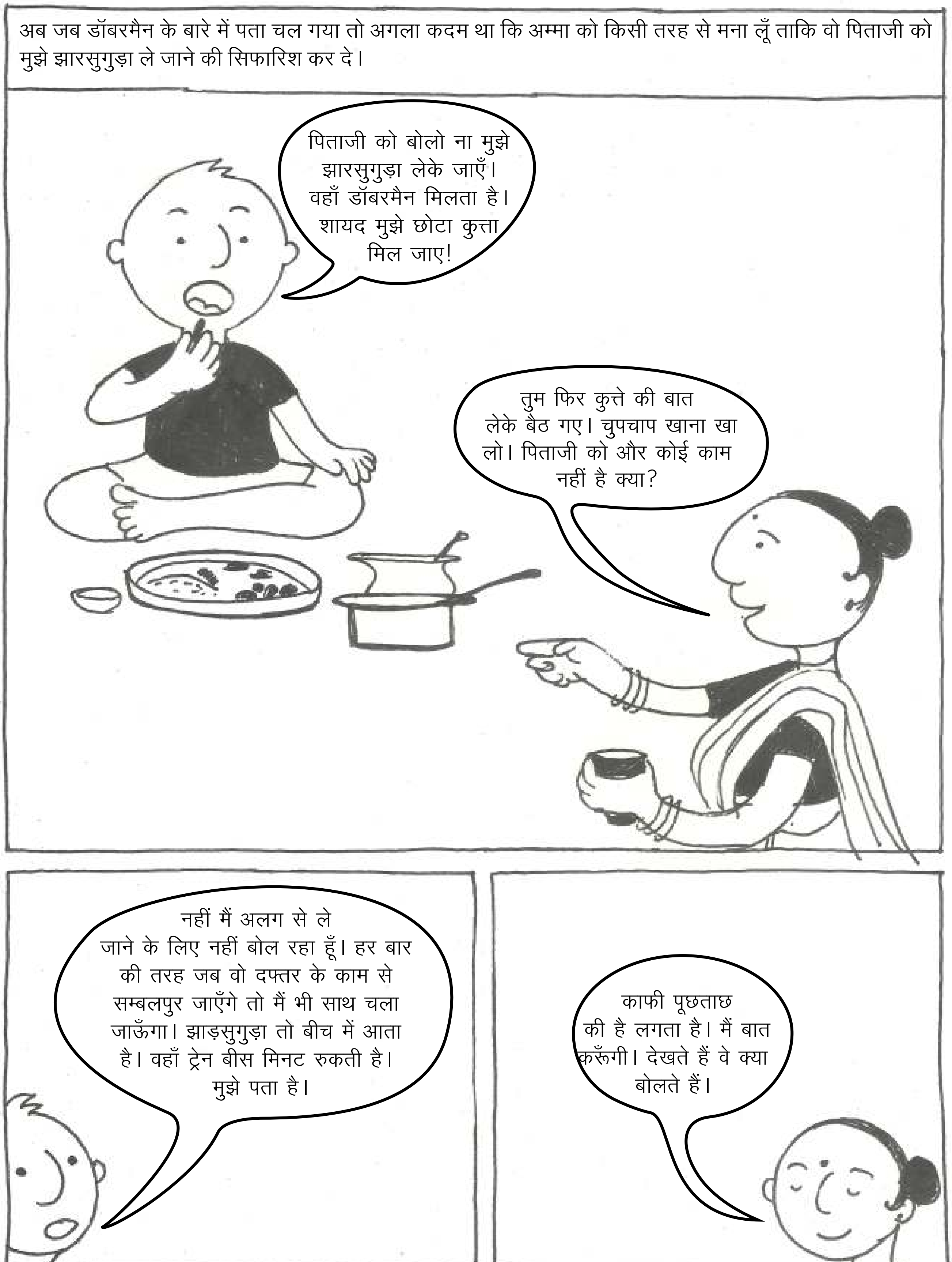
अब जब डॉबरमैन के बारे में पता चल गया तो अगला कदम था कि अम्मा को किसी तरह से मना लूँ ताकि वो पिताजी को मुझे झारसुगुड़ा ले जाने की सिफारिश कर दे।
पिताजी को बोलो ना मुझे झारसुगुड़ा लेके जाएँ। वहाँ डॉबरमैन मिलता है। शायद मुझे छोटा कुत्ता मिल जाए!
तुम फिर कुत्ते की बात लेके बैठ गए। चुपचाप खाना खा लो। पिताजी को और कोई काम नहीं है क्या?
नहीं मैं अलग से ले जाने के लिए नहीं बोल रहा हूँ। हर बार की तरह जब वो दफ्तर के काम से सम्बलपुर जाएँगे तो मैं भी साथ चला जाऊँगा। झाड़सुगुड़ा तो बीच में आता है। वहाँ ट्रेन बीस मिनट रुकती है। मुझे पता है।
काफी पूछताछ की है लगता है। मैं बात करूँगी। देखते हैं वे क्या बोलते हैं।

जारी...

मेरा पन्ना

– राहुल प्रजापत, छठी, राजस्थान

कौन हूँ मैं?

कौन हूँ मैं?
आँगन की चिड़िया या
पतंग की डोर हूँ मैं
मिट्टी की सौंधी खुशबू या
गुलाब की कली हूँ मैं
इठलाती, बहती नदी या मृगनयनी हूँ मैं।
मुस्कराती फूलों-सी
क्या कोई परी हूँ मैं
किताब की कोई कहानी या
उपन्यास का अंश हूँ मैं
किसी की पूजा या दुआ या
किसी की अरदास हूँ मैं
समन्दर पर इतराती
क्या कोई लहर हूँ मैं
सूरज की पहली किरण या
बरखा की पहली बूँद हूँ मैं
किसी कुम्हार के हाथ से बनी
क्या कोई मूरत हूँ मैं
शीतल कर दे मन को सबके
क्या हवा का झोंका हूँ मैं
कोई कहता पाप हूँ या
ज़िन्दगी पर बोझ हूँ मैं
कोई, कहता है खुदा का
कीमती तोहफा हूँ मैं।

– कनई पटेल, दसवीं,
देवास, म. प्र.

– निकुँज गुप्ता, गाज़ियाबाद

चूहा-बिल्ली

फाटक बन्द किया घर का
चूहे ने देखी बिल्ली
कुण्डी खटकी तो बोला
पूरा घर गया है दिल्ली

– करण, पाँचवीं, स्वामी विवेकानन्द विद्यालय लोधर ग्राम कानपुर, उ. प्र

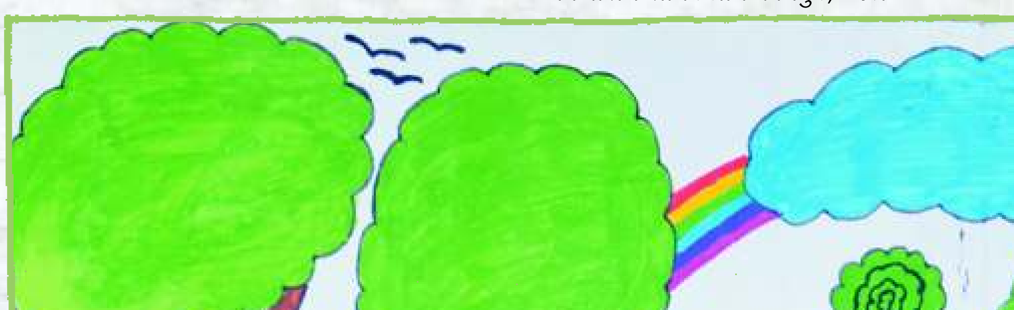

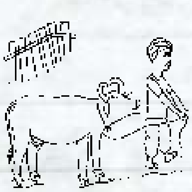

गुरूजी और जानवर

एक गुरुजी थे। वो ध्यान कर रहे थे। तो वहाँ पर कुछ ना कुछ आ गया था। जब उनका ध्यान पूरा हुआ तब उन्होंने आँखों से देखा तो वहाँ जानवर ही जानवर आ गए। शेर, हाथी, जेब्रा, जिराफ जो चिड़ियाघर में रहते हैं। और पक्षी भी। देखकर, गुरुजी ऐसे भागने लगा जानवरों को दूर करके। जानवर भी उसके पीछे-पीछे भागने लग गए। जानवरों ने सोचा रेस हो रही है। गुरुजी भागते ही रहे भागते ही रहे। जानवर भी दुबारा भागते रहे जैसे पहले भाग रहे थे। फिर एक कृष्णा आ गया। उसने कहा, "ये तो मेरे जानवर हैं। यहाँ कैसे आ गए। ये खुद ही आ गए होंगे।" कृष्णा ने बाँसुरी बजाई। जानवर उनके साथ आ गए। फिर उनका घर आ गया।

–ईशु, चार साल, सवाई माधोपुर, राजस्थान

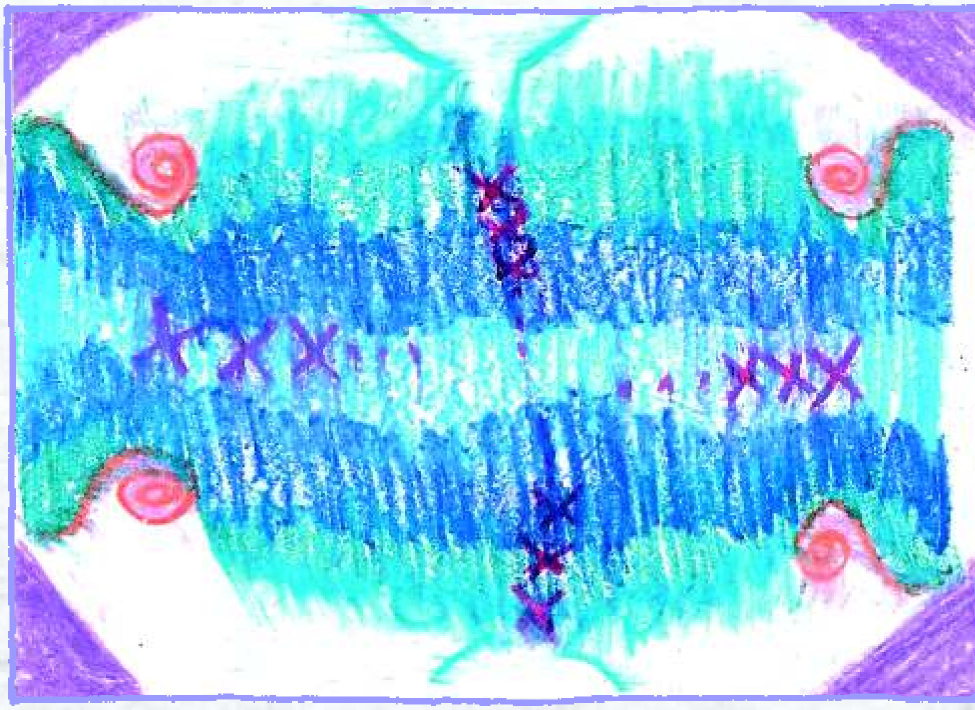

– नसरीन खातून, पाँचवीं, चेतला गर्ल्स हाईस्कूल, कोलकाता

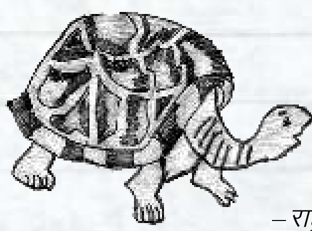

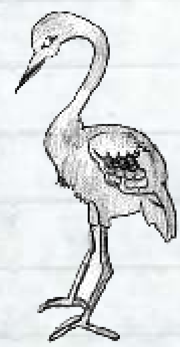

– राहुल प्रजापत, छठी, राजस्थान

–आकाश गौर, पाँचवीं, जे एस पब्लिक स्कूल मुरैना, म. प्र.

नन्हीं चिड़िया

दिन के उजाले में सिर्फ धूप सेंकने के अलावा मेरे दिमाग में कुछ नहीं था। तभी मुझे चीख सुनाई दी। मैं फौरन नीचे दौड़ा। मैंने देखा कि एक छोटी-सी चिड़िया मेरी माँ के पास गिरी हुई थी। वह घायल थी। मेरे पिताजी ने उसका उपचार किया। वह धीरे-धीरे ठीक होने लगी। एक दिन वह पूरी तरह ठीक हो गई। अब उसके जाने का वक्त था। मैं उसके लिए बहुत खुश था। जब वह नन्ही चिड़िया उड़ गई मैं उसके लिए बहुत खुश हुआ। वह दिन मेरी ज़िन्दगी का सबसे अच्छा दिन था।

–अनुराग शिवम, पाँचवीं,
डी. पी. एस पटना, बिहार

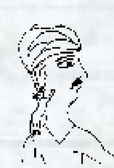

मेरा पन्ना

गिलहरी और कौआ

एक कौआ होता है और एक गिलहरी होती है। वे दोनों मित्र होते हैं। उन दोनों को भूख लगी। गिलहरी कौए से कहती है "कौए भाई, कौए भाई हम दोनों को भूख लगी है।" गिलहरी कौए से बोली, "तुम आकाश में उड़कर किसी के घर में बैठना और खाकर मेरे लिए भी ले आना।" कौए ने देखा उसके घर में ताला लगा होता है। तभी कौए को अचानक एक खेत दिखाई देता है। उसमें चना बोया हुआ था। कौआ खेत में जाकर चना खाने लगा और उसकी भूख मिट चुकी थी। वह गिलहरी के लिए कुछ नहीं लाया। गिलहरी भूख के मारे कराह रही थी। गिलहरी कौए से बोली, "कौआ भाई मेरे लिए कुछ नहीं लाए हो।" कौआ बोला, "गिलहरी बहन कुछ नहीं मिला।" तभी गिलहरी मर गई। कौए को दुख हुआ। एक दिन कौए को भी भूख लगी। कौए ने सोचा कि वह खेत में जाकर चना खाकर अपनी भूख मिटा लेगा। कौआ खेत में जाकर चने चुगने लगा। उसी समय किसान ने गुलेल से कौए को मार दिया।

—अभय गौतम, सातवीं, स्वामी विवेकानन्द विद्यालय, लोधर ग्राम, कानपुर, उ. प्र.

□*आकांक्षा खादटकर, दूसरी, आनन्द निकेतन स्कूल सेवाग्राम, वर्धा, महाराष्ट्र*

*–निखिल साहू,
हबीबिया स्कूल,
भोपाल, म. प्र.*

पापा जब छोटे थे

मेरे पापा जब छोटे थे बहुत शरारत करते थे। जब भी वे विद्यालय में जाते और वे टाट-पट्टी पर बैठते और टाटपट्टी की जो सुतली होती है उसे निकालकर एक कोने पे कागज़ बाँध देते थे और दूसरा कोना आगेवाले की पैंट से बाँध देते थे।

–अश्मिता चौहान, छठी, देवास, म. प्र

साँप निकाला

मैं और मेरे चाचा नहर में मछली पकड़ने गए थे। फिर हमने नहर में जाल डाला और जब हमने जाल को निकाला तो उसमें साँप और मछली निकली। फिर साँप जाल से निकलने की कोशिश किया पर साँप जाल में ही मर गया।

*–हिमांशी ध्रुव, चौथी,
अजीमप्रेमजी स्कूल धमतरी, छत्तीसगढ़*

अगर मैं भी

अगर मैं भी होता चिड़िया
अगर मेरे भी होते पंख
झट उड़ पहुँचता
एक जगह से दूजी जगह
कभी पेड़ पर कभी आकाश
मन करता तो खा जाता
ढेरों फल-फूल
मन करता तो जा उड़ता
आकाश में बहुत दूर
अपनी चोंच से दाना
चुनचुनकर खा लेता
और बचे हुए को झड़ककर
चले जाता अपने घर को
काश अगर मैं चिड़िया होता
अगर भी होते मेरे पंख

*–बृजेश कुमार यादव, सातवीं,
रुइया बंगरा, जीरादेई, बिहार*

–प्रकाश, विद्यावनम, तमिलनाडू

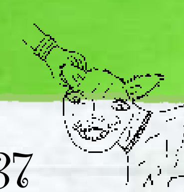

गुप्ता जी वैज्ञानिक बना रहे हैं और न्यूटन रो रहा है

ज्ञान चतुर्वेदी

हमारे विज्ञान शिक्षक का नाम गुप्ताजी था।

विज्ञान शिक्षा का उनका अपना निचोड़ यह था कि विज्ञान का ज्ञान बिना प्रयोग किए नहीं मिल सकता। "खूब प्रयोग किया करो। एक्सपैरीमेंट करने से ही साइंस पकड़ आती है।" यह कहते हुए वे हमेशा न्यूटन का उदाहरण देते। बताते कि देखो, न्यूटन बावड़े ने क्या किया था – वो रोज़-रोज़ सेब के पेड़ के नीचे बैठने का प्रयोग करता था। एक दिन सेब गिरा और उसने गुरुत्वाकर्षण की खोज कर डाली कि नहीं? ... ऐसे ही करो।... फिर वे आगे चेतावनी भी देते। कहते कि प्रयोग करो तो समझदारी से। न्यूटन ने समझदारी दिखाई न? समझदार न होता तो हो सकता है कि गुरुत्वाकर्षण की खोज के चक्कर में वो नारियल के पेड़ के नीचे बैठ गया होता। गुरुत्वाकर्षण की खोज तो शायद तब भी हो जाती पर साथ ही न्यूटन का सिर भी फूट जाता। सो, समझदारी से प्रयोग करो। वे हमें कहते कि तुम सबको एक दिन न्यूटन बनकर दिखाना है – सप्लीमेंट्री भी आ जाए, तो भी न्यूटन बनना। ऐसा कोई कानून नहीं है कि तुम्हारी थर्ड डिवीज़न या सप्लीमेंट्री आ गई है तो तुम न्यूटन नहीं बन सकते।... सब बनो।... बन जाओ तो हमें आकर बताओ। हम हेडमास्साब को बताएँगे। वे ज़िला शिक्षा अधिकारी को बताएँगे। स्कूल का नाम बैठे-ठाले हो जाएगा।

मैंने डरते-डरते गुप्ताजी से पूछा कि अपने गाँव में सेब का कोई पेड़ तो नहीं, फिर मैं कहाँ जाकर बैठूँ?...गुप्ताजी ने फटकारते हुए कहा कि तुम जहाँ समझो, बैठ लो, बस बबूल के नीचे न बैठ जाना। काँटे गड़ गए तो तुम्हारी सारी न्यूटनगिरी निकल जाएगी। गुप्ताजी का मानना था कि गाँव में सेब के पेड़ न होने का मतलब यह कतई नहीं है कि बच्चे न्यूटन बनना बन्द कर दें। आप किसी भी पेड़ के नीचे बैठकर न्यूटन बन सकते हो।

विज्ञान का पीरियड आते ही हम तनाव में आ जाते। सबको पता था कि सर क्या पूछेंगे। वे हर पीरियड इसी सवाल से शुरू करते थे और इसी मुद्दे पर खत्म भी करते थे कि बताओ, तुमने कल क्या प्रयोग किया और उस प्रयोग से क्या सीखा?... हमें कुछ न कुछ बताना होता। वे किसी भी बच्चे को उठाकर यह बात पूछते। न बता पाए तो उसकी ठुकाई करते। ठुकाई-पिटाई के विषय में गुप्ताजी नित-नए प्रयोग करते थे। कभी दाएँ हाथ को सुलाते हुए, कभी बाएँ हाथ को कराटे चॉप टाइप तिरछा करके, कभी पँजा खोलकर खुला झापड़ तो कभी एक साथ दोनों गालों पर लप्पड़ मारने के उनके प्रयोग चलते। कभी हम झापड़ की आशंका में प्रतीक्षारत होते तो वे घुमाकर वो लात मारते कि गुरुत्वाकर्षण को अचानक ही सक्रिय होकर हमें पटकने का कर्त्तव्य निभाना पड़ जाता।

वैसे हमारे स्कूल में एक "साइंस लैब" भी थी। यहाँ हमसे विज्ञान के प्रयोग करने की उम्मीद की जाती थी परन्तु इस पर हमेशा ताला पड़ा रहता था। गुप्ताजी बताते थे कि इसकी चाबी गुम गई है और मिलते ही काम चालू हो जाएगा। चाबी न मिल पाने के छोटे से कारण से हम लोग वैज्ञानिक बनते-बनते रह गए थे। कभी-कभी, हम लोग, उत्सुकतावश लैब के दरवाज़े में लगे काँच से अन्दर झाँकने की कोशिश करते थे। एक दिन गुप्ताजी ने मुझे पकड़ लिया। बहुत फटकारा। चेतावनी दी कि साइंस को दूर से देखकर नहीं सीखा जा सकता। कान मरोड़कर उन्होंने यही कहा कि जब तक लैब का ताला नहीं खुलता, घर में ही प्रयोग किया करो। मैंने डरते-डरते प्रार्थना की, "यदि आप तनिक कोई प्रयोग हमें समझा देते तो हम घर जाकर कर डालते।" वे आगबबूला हो गए। बोले कि न्यूटन ने किससे पूछा था? खुद ही किया था कि नहीं! उसने यह तो नहीं किया था न कि अपने बाप से जाकर पूछा हो कि पिताजी, हम थोड़ी देर को सेब के पेड़ के नीचे बैठ जाएँ क्या?... पूछता तो

पिताजी उसे कान पकड़कर घर बिठा लेते कि पहले अपना होमवर्क पूरा कर, तब बाहर मटरगश्ती करियो।...उन्होंने आर्कमिडीज़ का भी उदाहरण दिया। बोले कि क्या वो हमसे पूछकर पानी भरे टब में जाकर बैठा था जहाँ उसने तैरने के सिद्धान्त की खोज करी?... अरे, हमसे क्या पूछते हो। जो करना है, करो। हमें तो बस तुम न्यूटन टाइप कुछ करके बतलाओ।

न्यूटन के अलावा जिस दूसरी चीज़ पर गुप्ताजी का ज़ोर रहता था, वह थी वैज्ञानिक दृष्टि। गुप्ताजी कहते थे कि छात्र हर चीज़ को वैज्ञानिक दृष्टि से ही देखें। वे कहते कि यदि तुम कभी, पाँचवीं कक्षा से वैज्ञानिक दृष्टि को चालू करोगे तब जाकर ग्यारहवीं-बारहवीं कक्षा तक पहुँचते-पहुँचते तुम्हारी वैज्ञानिक दृष्टि ऐसी पैनी होगी कि शायद तुम्हें चश्मा लग जाए। तभी तो हर वैज्ञानिक की फोटो में चश्मा लगा दिखता है कि नहीं?

इधर विज्ञान की किताब हमें गणित की किताब जैसी ही ऊटपटाँग तथा अबूझ लगती थी। उसे खोलो तो आँखें मुँद जाती थीं और किसी भी तरह की दृष्टि नहीं रह जाती थी। पेज नम्बर भी पता हो तो भी पढ़ना मुश्किल था।

"किताब में हमें क्या देखना चाहिए मास्साब?" एक दिन मैं विज्ञान की किताब लेकर गुप्ताजी से सीखने की कोशिश करने लगा।

चित्रः अतनु राय

गुप्ताजी का मानना था
कि गाँव में सेब के पेड़ न होने का मतलब
यह कतई नहीं है कि बच्चे न्यूटन बनना बन्द कर दें।
आप किसी भी पेड़ के नीचे बैठकर न्यूटन बन सकते हो।

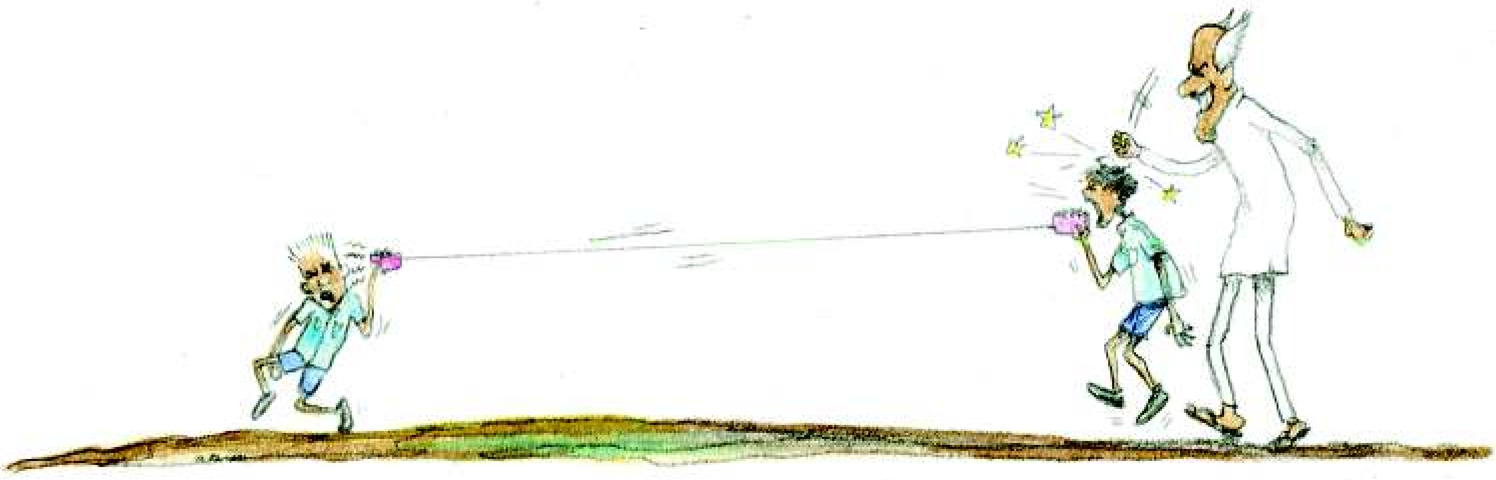

गुप्ताजी ने मेरे दुस्साहस की दाद देते हुए मेरे दोनों कान मल दिए। फिर साइंस की किताब पढ़ने का गुर बताते हुए बुनियादी बातें भी बताईं। बिना कान छोड़े ही वे बोले, "पहले तो यह सोच लो कि ये किताब कित्ते पैसे की है। हम बता दें कि किताब महँगी है और सम्भाल कर धरना। खो गई तो बाप ऐसी ठुकाई करेगा कि विज्ञान के साथ नागरिक शास्त्र भी भूल जाओगे।... ठीक?...फिर किताब पर अपना नाम भी चैक कर लेना कि तुम्हारी ही है कि दूसरे की? ... इसके बाद किताब खोल लो और उसे देखने लगो। अपने आप समझ में आ जाएगी। करके तो देखो।..."

"पर नहीं समझ आती मास्साब।...नहीं आई तो परीक्षा में हमारा क्या होगा?" मैंने जानना चाहा।

"उसके लिए तुम कुँजी पढ़ा करो।" गुप्ताजी ने स्थिति स्पष्ट की।

"न्यूटन कौन-सी कुँजी पढ़ता था, और ट्यूशन जाता था कि नहीं?" मैंने सहज जिज्ञासावश पूछ लिया।

"न्यूटन के ज़माने में कुँजी नहीं थी। होती तो वो और भी बड़ा वैज्ञानिक बनता। वैसे हमें लगता है कि ट्यूशन तो वो ज़रूर जाता रहा होगा।" गुप्ताजी ने बताया। वे दुखी थे कि न्यूटन के ज़माने में कुँजी होती तो कितना अच्छा होता।

तो इस तरह विज्ञान शिक्षा चल रही थी हमारी।

फिर क्या प्रयोग करते थे हम? किस तरह के प्रयोग थे वे? एक उदाहरण से बात स्पष्ट हो जाएगी।

एक दिन मेरा मित्र सरबन दो डिब्बों के बीच एक लम्बा तागा बाँधकर टेलीफोन जैसा कुछ बनाकर आ गया। कहने लगा कि यह ध्वनि का सिद्धान्त समझाने का एक प्रयोग है। दूर खड़े होकर डिब्बे में बोलो तो दूसरा डिब्बा कान में लगाकर वह बात सुनी जा सकती है। मैंने करके देखा। वास्तव में सुनाई दे रही थी। हम लोग शाबाशी की उम्मीद लेकर गुप्ताजी के पास इसे लेकर पहुँचे।

"ये क्या है?"

हमने प्रयोग करके दिखाया।

हमारा तागा दस-बारह फुट का था।

सरबन ने बोला। दूसरी तरफ मैं था। "सुनाई दे रहा," मैंने उत्तेजित होकर गुप्ताजी से कहा।

सरबन, गुप्ताजी के पास खड़ा था। पहला लप्पड़ उसी को पड़ा।

"अबे, डिब्बे में क्यों बोल रहा है।... दस फुट पर ग्यानू खड़ा है। ऐसे भी तू जो बोलेगा, वो सुन लेगा।... इत्ते पास से टेलीफोन होता है क्या?" वे फटकारने लगे।

"पर साइंस का सिद्धान्त है कि ..." मैंने कोशिश की।

"तेल लेने गया साइंस का सिद्धान्त।... अबे, इत्ते पास से डिब्बे में बोलना ही क्यों? ये कौन-सा साइंस का सिद्धान्त है कि पास खड़े आदमी से भी डिब्बे में बात की जाए?" गुप्ताजी ने मेरा डिब्बा मुझ पर ही फेंकते हुए पूछा और साथ ही लप्पड़ भी घुमा दिया।

"जी, ये तो बस प्रयोग था..." सरबन बताने लगा।

"तो?"

"तो, आप ही बताइए कि हम क्या करें मास्साब?" मैंने पूछा।

"क्यों? मुझसे क्यों पूछते हो? न्यूटन ने किसी से पूछा था क्या? बस, खुद सोचा और सेब के पेड़ के नीचे जाकर बैठ गया।"...

सिंहस्थ
कुंभ महापर्व 2016
विक्रम संवत् 2073

आस्था एवं अध्यात्म का अदभुत उत्सव

प्रिय श्रद्धालुगण,

यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे मध्यप्रदेश के साढ़े सात करोड़ नागरिकों की ओर से आपको सिंहस्थ 2016 के पावन अवसर पर आमंत्रित करने का अवसर मिला है। श्रद्धा एवं विश्वास का यह महापर्व पावन नगरी उज्जैन में 22 अप्रैल से 21 मई 2016 तक आयोजित होगा। सिंहस्थ जीवन का वह एकमात्र अवसर है जहाँ स्वयंभू महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग के दर्शन, मोक्षदायी पुण्य सलिला क्षिप्रा में स्नान तथा आनंददायी आध्यात्मिक संगम सब कुछ एक साथ संभव हो पाता है।

सिंहस्थ में अनेक देशों तथा पूरे भारत से श्रद्धालु आते हैं। क्षिप्रा के अमृत से साक्षात्कार आपके लिए एक अविस्मरणीय अनुभव होगा।

शिवराज सिंह चौहान
मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश

सिंहस्थ

कुंभ महापर्व उज्जैन
22 अप्रैल - 21 मई, 2016

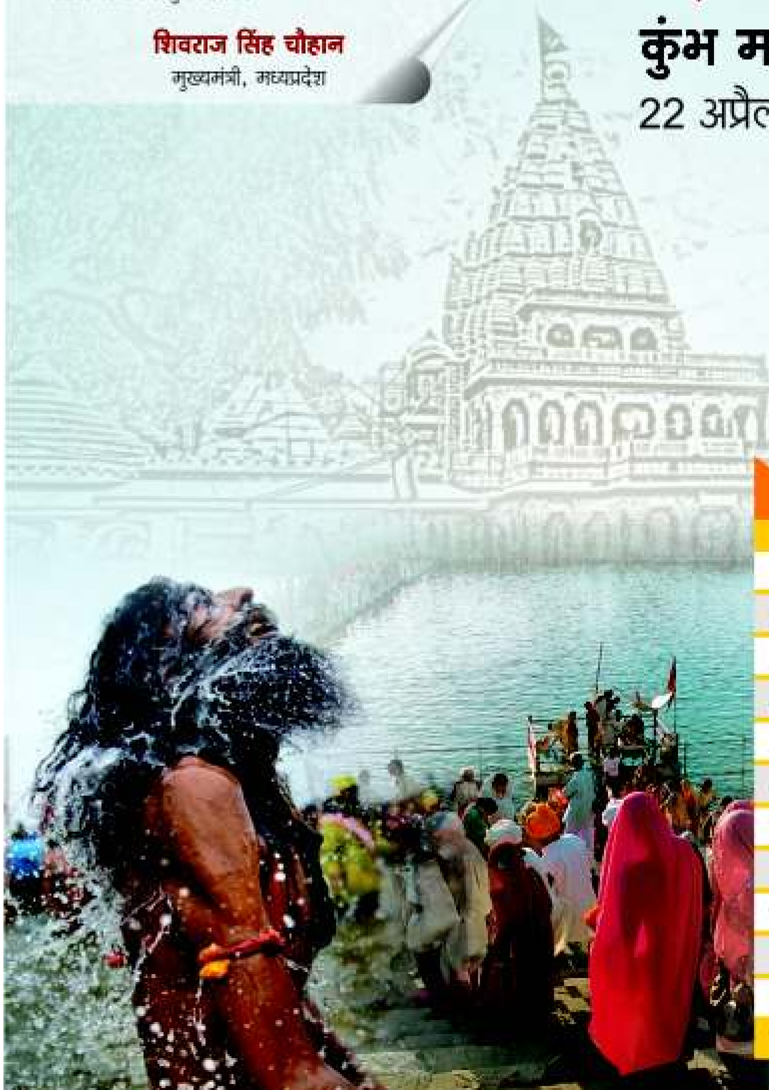

स्नान पर्व

1.	सिंहस्थ प्रथम पर्व स्नान	- 22 अप्रैल, 2016
2.	पंचशनि यात्रा	- 1 से 6 मई, 2016
3.	वरुथिनी एकादशी	- 3 मई, 2016
4.	पर्व स्नान	- 6 मई, 2016
5.	अक्षय तृतीया	- 9 मई, 2016
6.	शंकराचार्य जयंती	- 11 मई, 2016
7.	वृषभ संक्रांति	- 15 मई, 2016
8.	मोहिनी एकादशी	- 17 मई, 2016
9.	प्रदोष पर्व	- 19 मई, 2016
10.	नृसिंह जयंती पर्व	- 20 मई, 2016
11.	शाही स्नान	- 21 मई, 2016

पवित्र पंचक्रोशी यात्रा एक से 6 मई 2016 तक होगी।

म.प्र. माध्यम/77822/2015

D-77640 दिनांक - 3-11-2015

क्षिप्रा के तट पर अमृत का मेला

विस्तृत जानकारी के लिए वेबसाइट देखें : www.simhasthujjain.in www.mp-tourism.com/simhastha-kumbh

साँपों के साथ एक सुबह

सन्तोष कृष्णामूर्ति

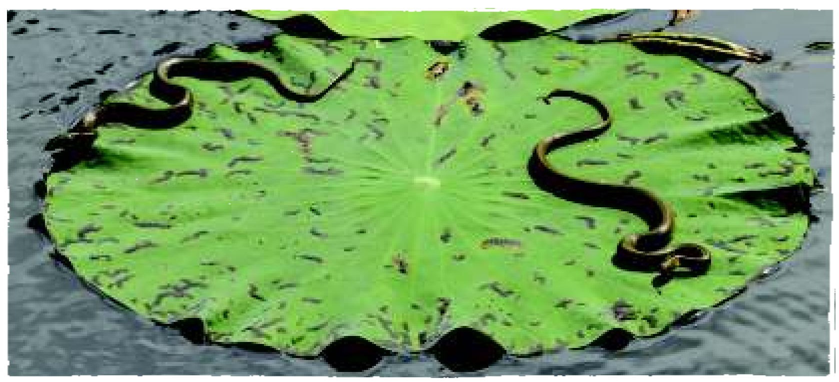

पृथ्वी पर जीवन जीने के लिए गर्माहट बहुत ज़रूरी है। इसके बिना जीवों का कोई कामकाज नहीं हो पाता - चाहे वो खाना हो, बच्चे पैदा करना, खुद को बचाना हो या और कुछ नहीं तो बस चलना-फिरना ही हो। उनके आसपास का तापमान चाहे कितना ही कम या ज़्यादा क्यों न हो, गर्म खून वाले जीवों के शरीर का एक तापमान बना रह पाता है। पर ठण्डे खूनवालों के लिए बहुत ज़्यादा या बहुत कम दोनों ही तापमान मुसीबत होते हैं। अगर लम्बे समय तक आसपास बहुत ठण्ड है तो उन्हें गर्माहट जुटानी पड़ती है। और गर्म जगहों पर ठण्डक पाने की कवायद करनी पड़ती है। वो पानी में डुबकी लगाकर मिले या छाया में आकर।

गर्माहट पाने का मुख्य स्रोत ज़ाहिर है सूरज ही है। इसीलिए ठण्डी रात के बाद अकसर छिपकलियाँ, साँप, मगरमच्छ, तितलियाँ...धूप सेंकती नज़र आ जाती हैं। कुछ तो बड़ी खूबसूरत जगहों पर सिंकाई करने पहुँच जाते हैं। और अगर जगह ऐसी हो जहाँ धूप के साथ-साथ खाना भी मुहैया हो जाए तो क्या बात!

ये दो साँप (checkered keelback या Asiatic water snake) भी यही करते लगते हैं। सुबह हो चुकी है पर सूरज अभी भी बादलों से घिरा है। इस छोटे से खूबसूरत तालाब में तैरते कमल के इस खूबसूरत पत्ते पर ये दोनों आए हैं। अब बादलों के छँटने का इन्तज़ार है बस। पर तब तक क्या करें! तालाब में मछलियाँ खूब हैं। तो नाश्ता ही कर लिया जाए तब तक!

इत्ते में एक और साँप इसी पत्ते की ओर बढ़ता दिखा। उसे पत्ते पर चढ़ता देख पहलेवाला साँप जो पत्ते के दाएँ कोने में था थोड़ा नीचे खिसक गया। बाएँ कोनेवाले साँप पर इस सब का कोई असर न हुआ। उसने अपने ध्यान को आसपास तैरती मछलियों से ज़रा भटकने न दिया।

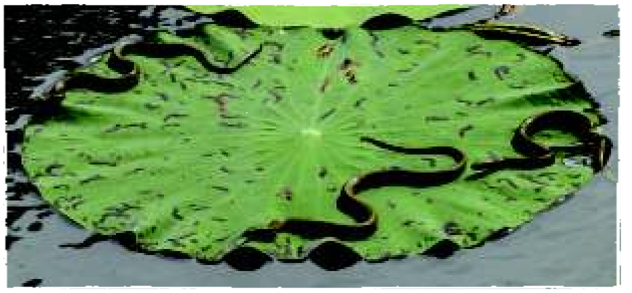

यह सब अभी चल ही रहा था कि एक और कीलबैक में इस पार्टी में शामिल होने की चाह जगी। पत्ते पर काफी भीड़ जमा हो चुकी थी (हमारे यहाँ की एक कहावत के अनुसार तो तीन भी भीड़ हो जाते हैं... यहाँ तो भाई चार-चार जमा हो चुके हैं)। पत्ते का सन्तुलन गड़बड़ाने लगा तो वो तितर-बितर होने लगे।

कुछ मिनटों के वकफे में ही इत्ता सब हो गया। इतनी गहमागहमी रही लेकिन वो बाएँ कोनेवाला कीलबैक इस सब से बेखबर अपने में मस्त पड़ा रहा। (...बुद्ध हो गया था वो...!)। यह शायद उसका रोज़ का काम था। अचानक उसे एहसास हुआ कि उस खूबसूरत पत्ते पर वो अकेला रहा गया है। थोड़ी देर बाद वो भी चला गया। पत्ता पहले की तरह अकेला रह गया था। मैंने भी कैमरे के शटर को बन्द किया और आगे बढ़ गया।

सुबह घर से निकलते वक्त सोचा था कि चिड़िया देखूँगा। उनकी फोटो खींचूँगा। पर जिस घटना का मैं गवाह बना वो... अब क्या कहूँ...

-सन्तोष कृष्णामूर्ति, लालबाग, बैंगलोर

(सन्तोष कृष्णामूर्ति की वेबसाइट http://framesofnature.com में तुम इस तरह की रोचक और भी चीज़ें पढ़ सकते हो।)

फनी पाठशाला

इरफान

प्यारे दोस्तो,

कमाल किया है तुमने! ढेर सारे कार्टून मिले हैं हमें। पर तुममें से ज़्यादातर ने अपनी कक्षा का चित्र खींचा है, जो आसान काम नहीं है। बस इसी में कुछ-कुछ मज़ेदार बातें टीचर से या बच्चों से कहलवाओगे तो बन जाएगा एक फनी कार्टून। वरना यह एक चित्र ही रहेगा।

नया साल आ रहा है। तो इस बार कार्टून का विषय रहा - नया साल। नए साल पर तुम्हारे कार्टूनों का इंतज़ार रहेगा।

तो मिलते हैं फिर।...सर्दी (उत्तरी भारत में) बहुत है ...अपना ख्याल रखना।

इरफान

- अबाबिया गुप्ता, तीसरी, डीपीएस लुधियाना

- शिरीन पुरी, चौथी, डीपीएस लुधियाना

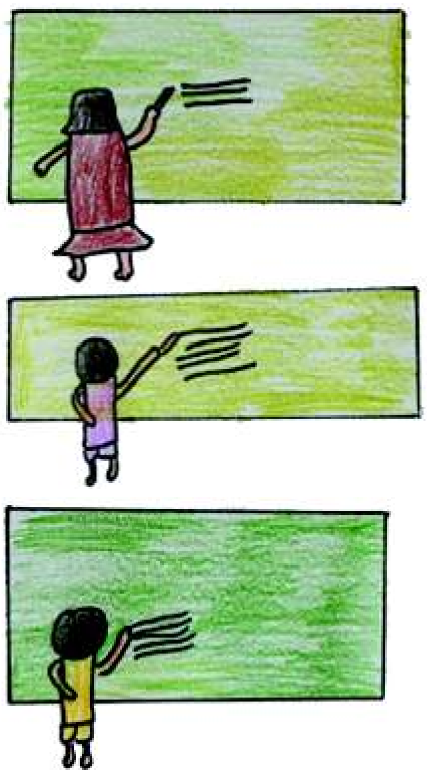

- मोहसिन हुनानी, चौथी, डीपीएसस तापी

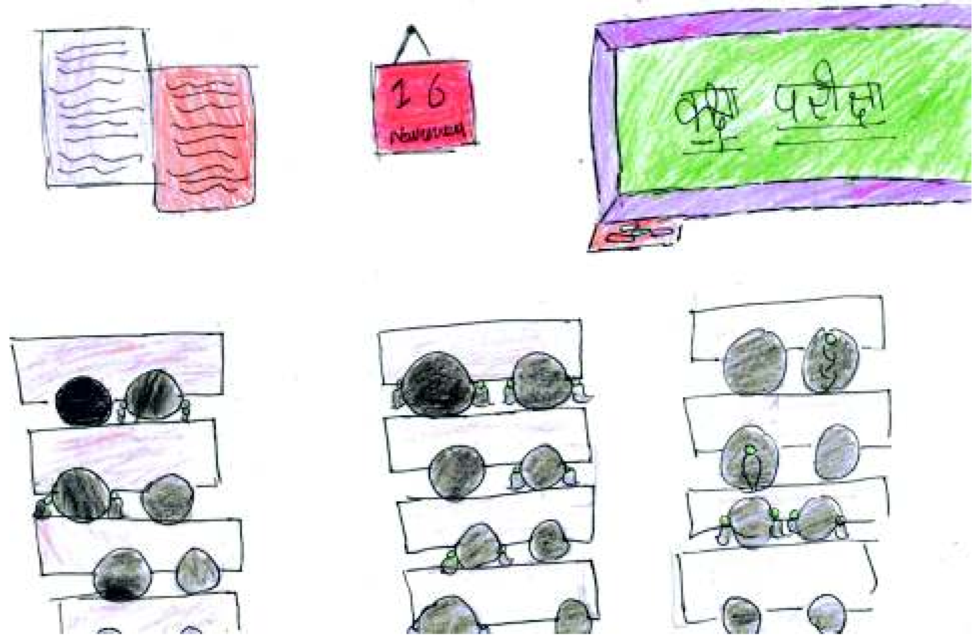

- ऑरव गाबा, तीसरी, डीपीएस, लुधियाना

- साहिरा घई, चौथी, डीपीएस, लुधियाना

- रिया राठी, चौथी, डीपीएस पुणे

- जिया गुप्ता, चौथी,डीपीएस तापी

एक था हाजी एक था नाजी

स्वयं प्रकाश

एक दिन नाजी ने हाजी से कहा, "चलो आज तुमसे एक पहेली पूछते हैं। है तो बहुत मुश्किल, लेकिन अगर तुमने सही जवाब दे दिया तो तुम्हें हज़ार रुपए इनाम! और अगर तुम सही जवाब न दे पाए, तो मैं तुमसे एक पैसा भी नहीं लूँगा।"

हाजी ने कहा, "ठीक है। पूछिए।"

नाजी बोला, "पहेली ऐसी है कि एक रेलगाड़ी डेढ़ सौ किलोमीटर प्रति घण्टा की रफ्तार से पूरब से पश्चिम दिशा की जानिब जा रही है। रात का वक्त है और बाहर का तापमान दस डिग्री से ज़रा कम है। ध्यान रहे, अक्टूबर का महीना है और बुधवार का दिन है। तो बताओ मेरी उम्र क्या है?"

हाजी कुछ देर सोचता रहा, फिर बोला, "पचास साल।"

नाजी को बड़ा ताज्जुब हुआ। जवाब एकदम सही था। उन्होंने कहा, "जवाब तो तुम्हारा ठीक है, लेकिन एक बात बताओ! तुमने ये हिसाब लगाया कैसे?"

हाजी बोला, "बात ये है कि मेरी फूफी का लड़का है एक। नाम है उसका बब्बन। गाँव में रहता है। वो भी कभी-कभी ऐसे ही सवाल पूछने लगता है। उसका दिमाग थोड़ा सरकेला है। समझो फिफ्टी परसेंट। तो इस हिसाब से भाईजान मैंने सोचा कि आप पचास से कम तो क्या होंगे!"

चित्रः अतनु राय

पत्रकार नाजी हुसैन एक दिन एक मानसिक चिकित्सालय में पहुँच गए। वहाँ डॉक्टर हाजी रावत से उनकी भेंट हुई। डॉक्टर हाजी रावत ने पत्रकार नाजी हुसैन को अपना चिकित्सालय दिखाया और बोले, "सरकार से कुछ फण्ड मिल जाए तो हम अपने चिकित्सालय को ज़्यादा सुविधापूर्ण बना सकते हैं।"

"फण्ड के लिए तो हम कोशिश कर सकते हैं लेकिन एक बात बताइए जब कोई मरीज़ आपके पास आता है, तो आप कैसे पहचानते हैं कि वह वास्तव में मानसिक रोगी है या मानसिक रोगी होने का सिर्फ नाटक कर रहा है?" पत्रकार नाजी हुसैन ने डॉक्टर हाजी रावत से पूछा।

"इसके लिए हमारे पास एक तरीका है।"

"क्या?"

"हम एक बाथटब को ऊपर तक पानी से भर देते हैं, फिर मरीज़ को एक चम्मच, एक कटोरी और एक बालटी देते हैं और उससे कहते हैं कि इस टब को खाली कर दो।"

"वाह! ये तो अच्छी तरकीब है। मानसिक रोगी होगा तो चम्मच या कटोरी का उपयोग करेगा और मानसिक रोगी नहीं हुआ तो बालटी का।"

"जी नहीं। मानसिक रोगी नहीं हुआ तो टब का ड्रेन प्लग खींचेगा जिससे टब फौरन और अपने आप खाली हो जाएगा। लेकिन चूँकि आपको बालटी का प्रयोग ठीक लगा है इसलिए आप बेड नम्बर उनचालीस पर चले जाइए।"

(यदि आपको भी बालटी का ही ध्यान आया हो तो आप बेड नम्बर चालीस पर चले जाइए।)

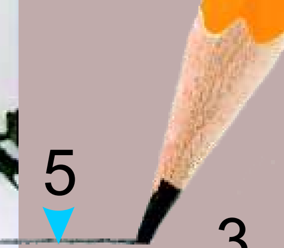

चित्र पहेली

► दाएँ से बाएँ ▼ ऊपर से नीचे

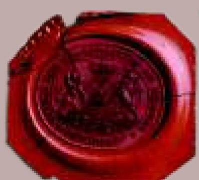

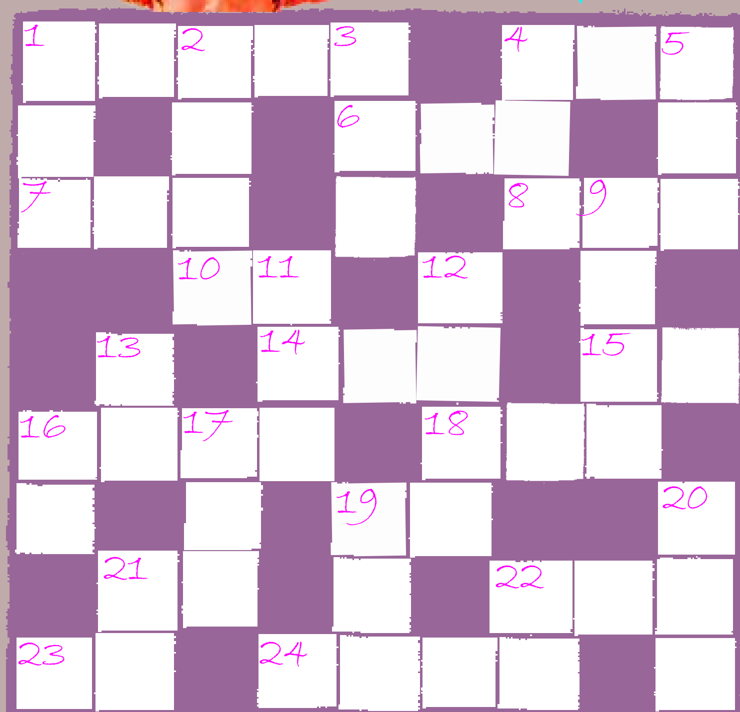

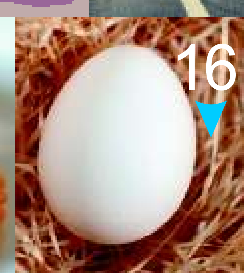

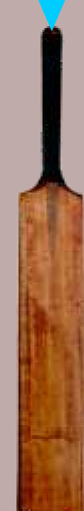

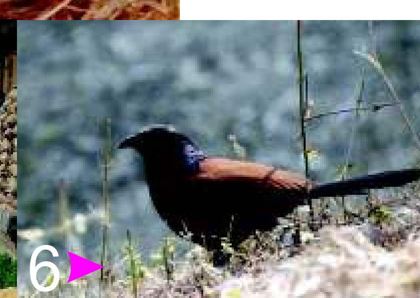

RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म.प्र. / भोपाल / 261 / 2015-17

प्रकाशक एवं मुद्रक अरविन्द सरदाना द्वारा स्वामी रैक्स डी रोज़ारियो के लिए एकलव्य, ई-10, शंकर नगर, 61/2 बस स्टॉप के पास, भोपाल 462016, म.प्र. से प्रकाशित एवं आर. के. सिक्युप्रिन्ट प्रा. लि. प्लॉट नम्बर 15-बी, गोविन्दपुरा इंडस्ट्रियल एरिया, गोविन्दपुरा, भोपाल - 462021 (फोनः 0755 - 2687589) से मुद्रित।
सम्पादकः सुशील शुक्ल